सर्वहारा दृष्टिकोण

सोशलिस्ट यूनिटी सेन्टर ऑफ इण्डिया (कम्युनिस्ट) का मुखपत्र (पाक्षिक)

वर्ष-26 अंक-18 22 सितम्बर से 6 अक्टूबर, 2011 मुख्य संपादक - कॉमरेड कृष्ण चक्रवर्ती मूल्य : 2 रुपये

मार्क्सवाद–लेनिनवाद–शिवदास घोष चिन्तनधारा के आधार पर संगठित क्रान्तिकारी आन्दोलन ही मुक्ति का एकमात्रा रास्ता है

5 अगस्त को कलकत्ता में हुई जनसभा में कॉमरेड प्रभाष घोष

(सर्वहारा के महान नेता कॉमरेड शिवदास घोष स्मृति दिवस पर गत 5 अगस्त को कलकत्ता में पार्टी की पश्चिम बंगाल राज्य कमेटी द्वारा आयोजित की गई जनसभा में कॉमरेड प्रभाष घोष के भाषण का हिन्दी रूपांतरण यहां प्रकाशित कर रहे हैं। अनुवाद की गलती, अभिव्यक्ति की कमी-खामी के लिए पूर्णत: हम जिम्मेदार होंगे– संपादक, सर्वहारा दृष्टिकोण)

आज हम राज्य-राज्य में मार्क्स-एंगेल्स -लेनिर्न-स्टालिन-माओ त्से-तुंग के सुयोग्य उत्तराधिकारी, इस युग के विशिष्ट मार्क्सवादी चिन्तनकार, भारत के सर्वहारा मुक्ति आन्दोलन के पथ प्रदर्शक कॉमरेड शिवदास घोष को श्रद्धा-सम्मान के साथ याद कर रहे हैं। इस दिन हम उनके महान क्रांतिकारी जीवन के प्रति तहेदिल से अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए उनके विशाल क्रांतिकारी ज्ञान भण्डार की कुछ मूल्यवान शिक्षाओं को याद कर उनके आधार पर मौजूदा हालात पर चर्चा करते हैं ताकि भावी क्रांतिकारी संघर्ष और जनआन्दोलन की राह रोशन हो और हम अपना क्रांतिकारी फर्ज निभाने में अगुआ भूमिका अदा कर सकें। आज

मार्क्स की मृत्यु के बाद महान लेनिन ने कहा था कि पूँजीवाद ने अपने अटल नियम से ही एकाधिकारी (मोनोपोली) पूँजी के स्तर पर पहुँच कर बैंकिंग पूँजी और औद्योगिक पूँजी के विलय के जरिए वित्तीय पूँजी को जन्म देकर साम्राज्यवादी चरित्र हासिल कर लिया है; अपने-अपने देश में बाजार संकट से रूबरू होने पर अविकसित देशों को हड़पता जा रहा है, उपनिवेश कायम करता जा रहा है, वहाँ के सस्ते श्रम और कच्चे माल को लूट रहा है। सस्ते श्रम और कच्चे माल की लूट के इस क्षेत्र पर कबिज विभिन्न देशों के बीच आपस में भीष्ण बैरभाव पैदा होता जा रहा है जिसके चलते बड़े पैमाने पर युद्ध छिड़ जो हैं।उन्होंने कहा था कि साम्राज्यवाद युद्ध पैदा करता है। बाद में लेनिन के सार्थक सहयोद्धा स्टालिन ने दिखाया था कि दूसरे विश्व युद्ध के बाद पूंजीवाद इतना संकटग्रस्त हो गया है कि महज बाजार के लिए उसे युद्ध की जरूरत है–इतना ही नहीं बल्कि उपभोक्ता सामानों का बाजार लगातार

ब्याजखोरी के कारोबार में लगाना भी शुरू कर दिया है। वित्तीय पूँजी की इस विशेषता ने इससे भी आगे निकल कर बाद में और भी विकराल रूप ले लिया, शेयर बाजार में पूँजी को लेकर बहुत बड़े पैमाने पर सट्टेबाजी शुरू हो गई। इन सब हथकण्डों का सहारा लेने के बाद एक समय सूचना तकनीक उद्योग में आये उछाल को लेकर बहुत शोर सुनने को मिला, मानो एक और औद्योगिक क्रांति हो गई हो। थोड़े दिनों बाद ही हाई टेक, डाट कॉम का गुब्बारा फट गया। इसके बाद अमेरिका व अन्य देशों में उद्योगों में नहीं लग पायी वह पूँजी फिर गयी तो कहाँ गयी? फिर पूँजीपति दो नये क्षेत्रों–रियल

एस्टेट और हाउसिंग यानी गृहभवन निर्माण उद्योग में पूंजीनिवेश करने लगे– जमीन खरीद कर फ्लैट बनाकर बेचने लगे जो अब हमारे देश में भी हो रहा है। इस रियल एस्टेट सेक्टर को बढ़ावा देने के लिए प्राइम लोन आया, यानी कर्ज पाने की पात्रता का जायजा लेने में आवश्यक प्रचलित कानूनी औपचारिकताओं का पालन कर जो गृह ऋण (होम लोन) दिया जाता था उससे जब काम नहीं चला, तो बैंक व फाइनेंस कम्पनियां कायदे-कानूनों में ढील देकर या उनको ताक पर रखकर खुले हाथों से कर्ज देने लगे। यहाँ तक कि जो मूलधन चुकाना तो दूर की बात, सूद तक भी नहीं चुका सकते थे, उनको भी रुपया उधार देने लगे। यही था

(शेष पृष्ठ 2 पर)

दिल्ली हाई कोर्ट में हुए बम विस्फोट पर एसयूसीआई(सी) का बयान

एसयूसीआई(कम्युनिस्ट) के महासचिव कॉमरेड प्रभाष घोष ने 8 सितम्बर, 2011 को निम्नलिखित बयान प्रेस को जारी किया: दिल्ली हाई कोर्ट के भीड़ भरे रिसेप्शन गेट पर हुए एक बम विस्फोट में 10 बेगुनाह लोगों की जान के नुकसान और बहुत बड़ी संख्या मेंलोगों के गंभीर रूप से घायल होने पर एसयूसीआई(कम्युनिस्ट) अपनी मर्मवेदना प्रकट करती है। यह

कुछ मूल्यवान शिक्षाओं को याद कर उनके आधार पर मौजूदा हालात पर चर्चा करते हैं ताकि भावी क्रांतिकारी संघर्ष और जनआन्दोलन की राह रोशन हो और हम अपना क्रांतिकारी फर्ज निभाने में अगुआ भमिका अदा कर सकें। आज की सभा में चर्चा करने के लिए मेरे पास कुछ प्रस्ताव सुझाव आये हैं, जैसे मौजूदा विश्व अर्थव्यवस्था, देश की अर्थव्यवस्था, राजनीति, देश में व्याप्त भयंकर भ्रष्टाचार, सांस्कृतिक संकट और सीपीआई (एम) की चुनावी हार आदि। सीपीआई (एम) देशभर में हमारे खिलाफ यह प्रचार कर रही है कि वामपंथी पार्टी होते हुए भी एसयूसीआई(कम्युनिस्ट) ने दक्षिणपंथी तृणमूल कांग्रेस की इस तरह सत्ता में आने में मदद क्यों की और उससे उनके शब्दों में, हमारा नुकसान ही हुआ है, कोई फायदा नहीं हुआ है–आज तृणमूल कांग्रेस सत्तारूढ़ है, इन हालात में हमारे साथ उसका क्या संबंध होगा इसमें कोई सन्देह नहीं कि सारे सवाल महत्वपूर्ण हैं। मैं कॉमरेड शिवदास घोष की शिक्षाओं की रोशनी में चर्चा करने की भरसक कोशिश करूँगा।

विश्व पूँजीवादी बाजार संकट और भी बढ़ेगा

आज भारत में जो आर्थिक संकट व्याप्त है, अमेरिका और यूरोप में जो संकट छाया हुआ है, वह एक–दूसरे से अलग–थलग नहीं है। बुर्जुआ राजनीतिज्ञ और अर्थशास्त्री इस संकट से उबरने का रास्ता खोजने में घनचक्कर बने हुए हैं। लेकिन हम जो मार्क्सवाद–लेनिनवाद–शिवदास घोष चिन्तनधारा के छात्र हैं, उनके लिए यह समस्या सीसे की तरह साफ है। 19वीं सदी के मध्य भाग में जब पूँजीवाद की प्रगति का युग चल रहा था, पूँजीवाद व्यापक औधोगिकीकरण का झण्डा उठाकर चल रहा था, तभी महान मार्क्स ने सच्चाई का पता लगाने के हथियार, विज्ञान पर आधारित द्वन्द्वात्मक वस्तुवादी दृष्टिकोण से सामाजिक परिवर्तन के नियम प्रतिपादित कर दिखाया था कि पूँजीवादी बाजार अर्थव्यवस्था में उत्पादन का लक्ष्य ही है मजदूरों को प्राप्य वाजिब मेहनताने से वंचित कर मुनाफा कमाना, इससे यह व्यवस्था खुद ही बाजार को संकुचित कर अपना गहन संकट पैदा करेगी, उद्योगों और उत्पादन की प्रगति को बाधित कर देगी। दिखाया था कि दूसरे विश्व युद्ध के बाद पूंजीवाद इतना संकटग्रस्त हो गया है कि महज बाजार के लिए उसे युद्ध की जरूरत है–इतना ही नहीं बल्कि उपभोक्ता सामानों का बाजार लगातार सिंकुड़ता जा रहा है। इसलिए वह जिस एक और तरह के औद्योगिक उत्पादन पर जोर देता जा रहा है, वह है सामरिक औद्योगिक उत्पादन। कॉमरेड स्टालिन ने कहा था कि यही है अर्थव्यवस्था का सैन्यीकरण(मिलीटराइजेशन ऑफ इकोनोमी)। इसके लिए उन्हें चाहे स्थानीय हो या बड़ा, उन्हें युद्ध छेड़ने, युद्धोन्मादपैदा के की जरूरत होती है। वरना उनकी मिलीटरी इण्डस्ट्री नहीं बचेगी। स्टालिन ने उन्हीं दिनों एक और बात कही थी कि पहले विश्वयुद्ध के बाद विश्व पूंजीवादी अर्थव्यवस्था का जो सापेक्ष स्थायित्व था, वह स्थायित्व दूसरे विश्वयुद्ध के बाद नहीं रहा है।

स्टालिन की मृत्यु के बाद कॉमरेड शिवदास घोष ने दिखाया था कि अर्थव्यवस्था का सैन्यीकरण का सहारा सिर्फ बड़े–बड़े साम्राज्यवादी देश ही नहीं, बल्कि भारत सहित सापेक्ष तौर पर पिछड़े हुए, कम विकसित पूंजीवादी देश भी ले रहे हैं। उन्होंने यह भी कहा था कि आज पूँजीवाद न के अपना सापेक्ष स्थायित्व खो चुका है, बल्कि पूँजीवादी बाजार का संकट अब सुबह–शाम का संकट हो गया है, पूंजीवाद अब एक संकट से उबरने के लिए जो सब तरकीब ले रहा है, उनसे और भी गहरे संकट में फंसता जा रहा है। अब आप विश्व पूंजीवादी–साम्राज्यवादी अर्थव्यवस्था की ओर नजर डालें तो पायेंगे कि यह डाँवाडोल है। दो साल पहले अमेरिका में आई महामंदी ने पूरी दुनिया को अपनी गिरफ्त में ले लिया था। लेनिन ने बहुत अर्सा पहले ही कहा था कि साम्राज्यवादी अपने उपनिवेशों में सिर्फ वित्तीय पूँजी को निवेश ही नहीं कर रहे हैं, बल्कि पूँजी को

निम्नलिखित बयान प्रेस को जारी किया: दिल्ली हाई कोर्ट के भीड़ भरे रिसेप्शन गेट पर हुए एक बम विस्फोट में 10 बेगुनाह लोगों की जान के नुकसान और बहुत बड़ी संख्या मेंलोगों के गंभीर रूप से घायल होने पर एसयूसीआई(कम्युनिस्ट) अपनी मर्मवेदना प्रकट करती है। यह लगभग वही जगह है जहां तकरीबन साढ़े तीन महीने पहले एक और बम विस्फोट हुआ था। दिल्ली के भीड़ भरे इलाकों में आंतकवादी हमले होने की पूर्वसूचना और इन इलाकों में आंतकवादी हमलों के सहज शिकार होने की पूरी–पूरी संभावना को मद्देनजर रखते हुए सरकार और सुरक्षा एजेन्सियों को इन जोखिम भरे इलाकों में आवश्यक संख्या में सीसीटीवी कैमरे लगाने चाहिएं थे और इनकी सुरक्षा का पुख्ता बन्दोबस्त करने चाहिएं थे। ऐसे नुकसान को देखते हुए यह बात लोगों की समझ से परे है कि इस बम विस्फोट की घटना की रोकथाम के कदम क्यों नहीं उठाये गये जबकि आये साल सुरक्षा और पुलिस बलों पर हजारों हजार करोड़ रुपये खर्च किये जा रहे हैं।

एसयूसीआई(कम्युनिस्ट) करती है कि इस बम विस्फोट के दोषी असली अपराधयों को गिरफ्तार कर और सुरक्षा में शिथिलता के दोषियों का पता लगा कर कड़ी सजा देने के लिए सारी घटना की न्यायिक जांच करायी जाये। पार्टी यह भी मांग करती है कि बम विस्फोट में मारे गये लोगों के परिवार वालों को उचित मुआवजा दिया जाये और सरकारी खर्च पर घायलों का पूरा इलाज किया जाये व उनका यथार्थ पुनर्वास किया जाये।

एसयूसीआई(सी) ने की पेट्रोल मूल्यवृद्धि वापस लेने की मांग

पेट्रोल के दामों में बढ़ोत्तरी का विरोध करते हुए एसयूसीआई (कम्युनिस्ट) पार्टी के महासचिव कॉमरेड प्रभाष घोष ने 16 सितम्बर को जारी किये गये बयान में कहा कि कांग्रेस के नेतृत्ववाली केन्द्र सरकार ने एक बार फिर तेल कंपनियों को पेट्रोल के दाम बढ़ाने की इजाजत दे दी है। इससे दैनिक जरूरत की चीजों के दामों में तेजी से वृद्धि होगी। उन्होंने कहा कि इससे आम आदमी की परेशानी और बढ़ जाएगी। उन्होंने केन्द्र सरकार के इस जन–विरोधी फैसले की कड़ी निन्दा की और इस पेट्रोल मूल्य वृद्धि को तुरन्त वापस लेने की माँग की।

कॉ. प्रभाष घोष का भाषण...

(पृष्ठ 1 का शेष)

सब-प्राइम लोन। इन सब कर्जों के बदले रखवाई गई प्लाटों की रजिस्टरियों व इकरारनामों को लेकर बहुत बड़े पैमाने पर सट्टेबाजी शुरू हो गई। बैंक, बीमा और फाइनेन्स कम्पनियां भी खुलकर इस सट्टेबाजी में उतर पड़ी। लेकिन जल्द ही यह गुब्बारा भी फट गया। जिन्होंने कर्ज उधार लिया था, उन्होंने कर्ज चुका न पाने पर हाथ खड़े कर दिये, वे डिफाल्टर हो गये। नतीजतन, सब-प्राइम लोन की कीमत धड़ाम से नीचे गिर गई है। सट्टेबाजी में बहुत बड़ा घाटा हुआ है। इसके चलते बैंक, बीमा और फाइनेन्स करने वाली संस्थाएं लगभग चरमरा गई हैं। वे दिवालिया हो गई हैं। विश्व अर्थव्यवस्था डगमगा गई है जिसकी झलक हाल ही की इस महामन्दी के रूप में दिखाई दी है। करोड़ों मजदूरों को छंटनी हो गई है। हमारे देश में भी इस मंदी की आँच आई है, अब आखिरकार अमेरिकी और यूरोपीय अर्थव्यवस्थाओं की ओर नजर डालें तो पायेंगे कि उन देशों में अब आमदनी से ज्यादा खर्च है। बजट में बहुत बड़ा घाटा है। यह घाटा पूरा करने के लिए बाजार से उधार लेना पड़ रहा है। अर्थव्यवस्था कर्ज पर खड़ी है। देखिये अमेरिका का क्या हाल है? अमेरिका ने 14 लाख 30 हजार करोड़ डालर कर्ज लिया हुआ है। बांड बेचकर यह धन इकट्ठा किया गया है। अब उसे और भी धन की जरूरत है क्यों कि वह ब्याज नहीं चुका पा रहा है, कर्मचारियों को वेतन नहीं दे पा रहा है, सामाजिमक कल्याणकारी जो सब योजनाएं व स्कीम हैं उन्हं नहीं चला पा रहा कै। इसलिए अमेरिकी सरकार को उधार लेने की सीमा बढ़ाने को अधिकार चाहिए। डेमोक्रेट और रिपब्लिकन दोनों ही पाटियों की काफी नौंक-झौंक के बाद कर्ज लेने की ऊपरी सीमा और भी 2 लाख 10 हजार करोड़ डालर बढ़ायी गई तब जाकर मामले का निपटारा हुआ। इसके बाद इससे भी काम नहीं चलेगा। उन्हें और भी कर्ज लेना पड़ेगा। पूरे यूरोप पर नजर डाल कर देखिये। यूनान तो पहले ही दिवालिया घोषित किया जा चुका है।, आयरलैण्ड, पुर्तगाल, इंग्लैण्ड, स्पेन, इटली एक के बाद दूसरा धंसता जा रहा है। 'सोवेरेन डेट' मतलब देश ऋणग्रस्त है, मतलब कर्ज लेकर सरकार चलाई जा रही है। पहले तो कर्ज के जरिये बनावटी तौर पर बाजार में तेजी लाने और सट्टेबाजी में घाटा खाने से आर्थिक प्रतिष्ठान डूबे और अब देश चलाने के लिए कर्ज इतनी बड़ी मात्रा में ले लिया कि

अखबार में छपा था कि रोजगार की तलाश में माँ-बाप, दोनों ही प्रदेश चले गये हैं। उनकी सन्तानों को देखने वाला कोई नहीं है। लाखों बच्चे इस तरह अनाथ हो गये हैं, जिनके माँ-बाप का कोई पता-ठिकाना नहीं है। देश के देहात का यही है चेहरा। इस देश में कई लाख किसानों ने कर्ज नहीं चुका पाने की लाचारी में खुदकुशी कर ली है। लाखों लोग भुखमरी के शिकार हैं, इलाज के बगैर मर रहे हैं। इस देश में अब नारी देह को लेकर एक बहुत बड़ा धंधा फल फूल उठा है। कलकत्ता इस गंदे धंधे का एक महत्वपूर्ण केन्द्र है। क्या इसी आजादी के लिए ही इस देश के लोगों ने आजादी की लड़ाई लड़ी थी और देश के सैकड़ों शहीदों ने अपनी जान कुर्बान की थी?

किसका विकास हो रहा है? विकास हो रहा है कारपोरेट सैक्टर का, एकाधिकारी पूँजीपतियों का। वे हर पल लोगों का खून चूस कर करोड़ों रुपये कमा रहे हैं, धन के अम्बार लगा रहे हैं। हमारे देश के 5 परिवार दुनिया के चोटी के 10 अमीरों की सूची में चले गये हैं। फुटपाथ पर सोने वाले लोग निश्चय ही यह सुन कर गर्व महसूस करते होंगे! हमारे देश के 63 परिवार 500 करोड़ या उससे ज्यादा रुपयों के मालिक हैं और यह संख्या बढ़ती जा रही है। जबकि दूसरी तरफ 85 करोड़ लोगों की रोजाना 20 रुपये से ज्यादा खर्च करने की क्षमता नहीं है। यह है आज देश की तस्वीर। अमार और गरीब के बीच की खाई बढ़ती जा रही है। यह और बढ़ेगी , चाहे कांग्रेस, बीजेपी, सीपीएम, तृणमूल या अन्य जो भी सरकारी गद्दी पर रहे। जो यह दावा करता है कि पूँजीवाद को टिकाये रखकर इस संकट से निजात दिलाकर विकास करवायेगा—उसका दावा कोरी झूठ का पुलिन्दा है, लोगों की आँखों में धूल झोंकना है। यह झूठ-फरेब की राजनीति हम नहीं करते। इसीलिए पूँजीवाद को उखाड़ फेंकने का सवाल है, इसीलिए क्रांति की जरूरत है—जिस क्रांति का आह्वान कॉमरेड शिवदास घोष कर गये हैं।

दूसरी ओर, देश की राजनीति की ओर नजर डाल कर देखिये। इस देश में जिस समय ब्रिटिश साम्राज्यवाद चाहता था कि भारत के लोग गुलाम रहें, अशिक्षा के अंधकार में रहें, उसी समय लेकिन इस देश में राम मोहन, विद्यासागर ने नव जागरण की मशाल जलायी थी। उसी की धारावाहिकता में बंकिम चंद्र, विवेकानंद, रवीन्द्रनाथ, शरतचंद्र, नजरुल आये थे। आजादी आंन्दोलन में सी आर दास, तिलक, लाला लाजपत राय, विपिन पाल, सुभाष चंद्र बोस आये थे। खुदीराम से शुरू करके भगतसिंह, प्रीतिलता और न जाने कितने क्रांतिकारी आये थे। ब्रिटिश साम्राज्यवादी शासक नहीं चाहते थे, वे चिढ़ते थे, लेकिन इसके

है जो एक समय प्रगतिशील होते थे। इतिहास के एक खास दौर में कुछ धर्म जब दास प्रथा के खिलाफ लड़े रहे थे, तब धर्म आम तौर पर समाज में नीति-नैतिकता लाये थे। धर्म ने क्या सहीऔर क्या गलत यह बताया था, न्याय-अन्याय का बोध, कर्त्तव्य-दायित्व बोध जगाया था, उस समय धर्म ने कई महापुरुषों को जन्म दिया था। काल के पथ पर, सामाजिक परिवर्तन की अटल प्रक्रिया में सामन्तवादी उत्पादन संबंधों के पतन के युग में धर्म ने अपनी प्रगतिशीलता खो दी और निहित स्वार्थों के हाथों में सुविधा के हथियार में तब्दील हो गया, जब अधर्म पैदा किया, सामंतवादी अन्याय-अत्याचार के पक्ष में खड़ा हो गया, धर्म जब इन्सानों को और इन्सानियत नहीं दे पाया बल्कि हैवान बना डाला तभी धर्म के खिलाफ लड़ाई लड़कर धर्मीय प्रभाव से मुक्त धर्मनिरपेक्ष मानवतावाद व राष्ट्रवाद आया। एक जमाने में, एक समय तक समाज को आगे ले जाने में वह प्रगतिशील रहा। फिर पूँजीवाद प्रतिक्रियाशील हो जाने के बाद यह बुर्जुआ मानवतावाद, राष्ट्रवाद वह भूमिका अदा नहीं कर पाया। आज के राष्ट्रवाद का मायने है येन केन प्रकारेण काले धंधे करना, रुपये कमाना, चापलूसी करना और मौज करना। कौन मरा, कौन बचा, कौन दुख-तकलीफ और कंगाली में है और कौन नहीं—यह परवाह नहीं करना। आज का राष्ट्रवाद महान आदर्श व उद्देश्य के लिए मरना, जान कुर्बान करना और यातनाएं सहना नहीं सिखाता, बल्कि धन हड़पना सिखाता है। इस स्तर पर पूरी पूँजीवादी व्यवस्था भ्रष्टाचारग्रस्त है। इसलिए जो इस पूँजीवाद का स्वार्थ देखेंगे, जो इस पूँजीवाद के साथ समझौता करके चलेंगे, इनका हुक्म बजाते जायेंगे, उनका चरित्र अध:पतित होना लाजिमी है। इसीलिए हमारे देश में आजादी आन्दोलन के जमाने में जब वंदे मातरम करने से, खद्दर पहनने से जेल जाना पड़ता था, मार खानी पड़ती थी, तब जिस बुर्जुआ राष्ट्रवाद ने चरित्र दिया, आज वह और चरित्र व इन्सानियत नहीं दे सकता। उल्टे यह चरित्र व इन्सानियत खत्म कर रहा है। इसीलिए कॉमरेड शिवदास घोष ने बहुत दिनों पहले इसका कारण बताया था कि क्यों समाज में यह नैतिकता का संकट दिखाई दिया है। उन्होंने कहा था कि सामाजिक जीवन में धार्मिक मूल्यबोध नि:शेषित हो गये हैं, बुर्जुआ राष्ट्रवादी मूल्यबोध भी नि:शेषितप्राय हैं, दूसरी तरफ सर्वहारा क्रांतिकरी मूल्यबोध आज तक भी ज्यादातर लोगों तक पहुँचे नहीं हैं। नतीजतन समाज में मूल्यबोधों की इस शून्यता से ही नैतिकता का पतन हो गया है। उन्होंने यह भी कहा था कि एकमात्र सर्वहारा क्रांतिकारी मूल्यबोधों पर आधारित पूँजीवाद-विरोधी क्रांतिकारी आन्दोलन की प्रगति ही

ऋणग्रस्त है, मतलब कर्ज लेकर सरकार चलाई जा रही है। पहले तो कर्ज के जरिये बनावटी तौर पर बाजार में तेजी लाने और सट्टेबाजी में घाटा खाने से आर्थिक प्रतिष्ठान डूबे और अब देश चलाने के लिए कर्ज इतनी बड़ी मात्रा में ले लिया कि पूरा देश ही दिवालिया होता जा रहा है। कर्ज का यह बोझ क्यों बढ़ता जा रहा है? इस कर्ज के बोझ का एक कारण है सामरिक अर्थव्यवस्था की ओर अत्यधिक झुकाव, जिस सामरिक यानी फौजी अर्थव्यवस्था से कुछ भी रिटर्न नहीं मिलता है, उल्टे खर्चा बढ़ता है। इसका दूसरा कारण है बड़े-बड़े कारपोरेट सैक्टर, बहुराष्ट्रीय कम्पनियों ने देश को दिये जाने वाले टैक्स अपनी-अपनी बुर्जुआ सरकारों से पहले की तुलना में काफी घटवा लिये हैं। तीसरा कारण यह है कि सब-प्राइम लोन संकट के धक्के से पिछली महामंदी के समय इन कारपोरेटों, बहुराष्ट्रीय कम्पनियों ने राजकोष से यानी पब्लिक के पैसों से काफी मात्रा में अनुदान लिया है और विशेष कर छूट हासिल की हैं जिनको वे आर्थिक प्रोत्साहन (इकोनोमिक स्टीमूलस) कहते हैं। जिन पूँजीपतियों, जिन साम्राज्यवादियों ने बेलगाम बाजार लूट कर यह संकट पैदा किया उनको पब्लिक के पैसे से उनके देश, सरकार ने पैसा दिया। यह कृत्रिम सांस (वेन्टीलेशन) देकर मरणासन्न रोगी को जिन्दा रखने जैसी बात है, जो मैंने पहले ही कही थी। आज का संकट ऐसा है। यह संकट बढ़ता ही रहेगा, किसी के बस की बात नहीं है जो इस संकट से पूँजीवाद को बचा सके।

भारतीय परिदृश्य

इस स्थिति में देश के जो राष्ट्रनायक हैं, मंत्री हैं वे दावा कर रहे हैं कि भारत की अर्थव्यवस्था को वे संकट से बचा लेंगे। वे मानो फरिश्ते हैं, उनके हाथ में जादू की छड़ी है। इसलिए यह बात कह ही सकते हैं। वे यह भी कह सकते हैं कि यह शंकराचार्य का देश है, यहाँ जिनको समस्याओं के रूप में देखा जा रहा है, वह सब कुछ माया है। वास्तव में हमारे देश का हाल क्या है? हमारे देश में 2004 में 4 लाख से अधिक कारखाने बंद पड़े थे। आज 2011 में निश्चय ही हम अंदाजा लगा सकते हैं कि छोटे-बड़े और मझौले कुल मिला कर 10-15 लाख कारखाने बंद हो चुके होंगें, कई करोड़ मजदूरों की छंटनी हो चुकी है। हमारे देश में महंगाई और मुद्रास्फीति लगातार बढ़ती ही जा रही है, इसके घटने का कोई आसार नजर नहीं आता है। बेरोजगारों व अर्धबेरोजगारों से देश भरा पड़ा है। लाखों लोग काम न मिलने पर और जमीन से बेदखल होकर गाँवों से आये दिन शहरों की ओर पलायन करते जा रहे हैं, ये सब माइग्रेन्ट लेबर (प्रवासी मजदूर)हैं, ये बेघर हुए मजदूर दर दर की ठोकरें खाने को मजबूर हैं। इन्हें नहीं पता जायें तो जायें कहाँ। इन्हें नहीं पता कि कहाँ काम मिलेगा। अभी कुछ दिनों पहले

आर्न्दोलन में सी आर दास, तिलक, लाला लाजपत राय, विपिन पाल, सुभाष चंद्र बोस आये थे। खुदीराम से शुरू करके भगतसिंह, प्रीतिलता और न जाने कितने क्रांतिकारी आये थे। ब्रिटिश साम्राज्यवादी शासक नहीं चाहते थे, वे चिढ़ते थे, लेकिन इसके बावजूद देश की इनसानियत, विद्वता, प्रतिभा ने उन दिनों उभर कर आई थी। फांसी के तख्तों पर जीवन का जयगान गाते हुए जवानी सीना तान कर उठ खड़ी हुई थी। उन दिनों राजनीति करने वाले नेता-कार्यकर्ताओं को लोग श्रद्धा की नजरों से देखा करते थे। यह सुनते ही कि आजादी आन्दोलन से जुड़ा हुआ है, श्रद्धा से लोगों के सिर झुक जाते थे। जबकि आज देखिये, आये दिन जो खबरें छप रही हैं उनसे देखने को मिलता है कि राजनीति के मंच पर सरकारी पार्टियों के ज्यादातर नेता भ्रष्ट हैं, चोर हैं। ये सत्ता के बल पर पब्लिक के पैसे को लूट रहे हैं। हालाँकि कांग्रेस ही इस मामले में आगे है, लेकिन बाकी शासक पार्टियाँ बीजेपी से लेकर सीपीएम तक कोई भी दूध की धुली नहीं है। सवाल उठते ही वे तुरंत कहती हैं कि दूसरी पार्टियाँ भी तो घेटाले कर रही हैं। मानो ऐसा करना तो उनका न्यायसंगत अधिकार है। आत्मग्लानि होना तो दूर की बात, उन्हें जरा भी शर्म-संकोच नही है। जनता ने भी मान लिया है कि मंत्री और उनके चाटूकारों सहित सभी कमोबेश कुछ न कुछ तो खायेंगे ही, कोई कम खाता है, कोई ज्यादा खाता है, बस यही फेर्क है। ऐसा क्यों हो रहा है? इसकी भी वजह है पूँजीवाद।

सांस्कृतिक पतन, लोभ-लालच व भ्रष्टाचार का मूल कारण

आप लोगों को मार्क्सवाद की एक सीख याद दिला देना चाहता हूँ। मार्क्सवाद कहता है हक हरेक समाज में उत्पादन व्यवस्था बुनियाद होती है और उसको आधार करके मनुष्य का चिन्तन, राजनीति, राजनैतिक संगठन, कायदे-कानून, सांस्कृतिक मननजगत आदि सब कुछ मिलकर ऊपरी ढाँचा बनता है। जब तक उत्पादन के संबंध समाज की उत्पादन की शक्तियों के विकास में मददगार होते हैं, तब तक उनको आधार करके बना चिन्तन जगत और भावजगत प्रगतिशील रहता है। उत्पादन संबंध जब उत्पादन की शक्तियों की प्रगति में बाधक बन जाते हैं, तब वे प्रगतिशीलता खो देते हैं। उत्पादन की शक्तियाँ होती हैं एक ओर तो श्रम शक्ति और दूसरी ओर उत्पादन के साधन। उत्पादन संबंध होते हैं उत्पादन को आधार करके आदमी आदमी के बीच बनने वाले रिश्ते। दासप्रभू और दास, सामंत प्रभू और भदास, पूँजीपति मालिक और मजदूर – ये सब हैं उत्पादन के संबंध। आज पूँजीवाद के प्रतिक्रियाशील स्तर में पूँजीपति और मजदूर के पूंजीवादी उत्पादन संबंध उत्पादन की शक्तियों के विकास में बाधक हैं। नतीजतन चिंतन जगत में, भाव जगत में बुर्जुआ मानवतावाद और बुर्जुआ राष्ट्रवाद आज प्रतिक्रियाशील हो गया

ज्यादातर लोगों तक पहुँचे नहीं हैं। नतीजतन समाज में मूल्यबोधों की इस शून्यता से ही नैतिकता का पतन हो गया है। उन्होंने यह भी कहा था कि एकमात्र सर्वहारा क्रांतिकारी मूल्यबोधों पर आधारित पूँजीवाद-विरोधी क्रांतिकारी आन्दोलन की प्रगति ही इस नैतिक पतन को रोक सकती है।

ईमानदार होने के बावजूद गाँधीजी की त्रासदीपूर्ण परिणति क्यों हुई

प्रचलित धारणा यह है कि आदमी अगर ईमानदार होते, तो ऐसा भ्रष्टाचार नहीं होता। क्योंकि देश में कोई ईमानदार व्यक्ति नहीं है इसलिए समाज में भ्रष्टाचार का इतना ज्यादा बोलबाला है। मानो, किसी व्यक्ति के चाहने से ही वह खुद ईमानदार रह सकता हो। लेकिन हकीकत यह है कि ईमानदार रहने के लिए भी एक मूल्यबोध चाहिए, सामाजिक आन्दोलन चाहिए। यह सच है कि जिस तरह ईमानदारी और इनसानियत का जज्बा आजादी आन्दोलन के दौरान दिखाई दिया था, वह आज प्रचलन में नहीं है। ऐसा क्यों है? इसकी वजह भी सामाजिक है। जब तक एक खास तरह के मूल्यबोध व नैतिकता प्रासंगिक रहती है और उनकी समाज में प्रगतिशील भूमिका रहती है, तब तक उन पर चलना कुछ ईमानदारी और नीति-नैतिकता प्रदान करता है। विवेक और प्रवृत्ति के बीच एक द्वंद्व पैदा हो जाता है और आम तौर पर विवेक यानी जमीर प्रवृत्ति को वश में रखता है। फिर केवल ईमानदार रहने से ही काम नहीं चलेगा। यहाँ मैं कॉमरेड शिवदास घोष की एक कीमती सीख का जिक्र करना चाहता हूँ। हर किसी को व्यक्तिगत तौर पर ईमानदार होने पर भी अपना दृष्टिकोण ठीक रखना होता हैं, वरना उसके द्वारा समाज का भला होने की बजाय बुरा हो जाता है। इसकी बहुत बड़ी मिसाल हमारे सामने गाँधीजी हैं। कॉमरेड शिवदास घोष ने कहा है कि उस जमाने में गाँधीजी बड़े आदमी थे, ईमानदार आदमी थे। फिर उन्होंने यह बात भी कही है कि गाँधीजी को सामने रखकर भारत के राष्ट्रीय पूँजीपति वर्ग ने अपना उल्लू सीधा किया है। गाँधीवाद, गाँधीवाद कह कर काफी हर्षोउल्लास दिखाते हैं। लेकिन उनमें ऐसे कितने लोग हैं जो गाँधीवाद की खोज खबर, जानकारी रखते हैं? विचार-विवेचना के लिए मैं गाँधीजी की खुद की कही हुई कुछ बातें बताता हूँ। गाँधीजी ने कहा था, 'समाजवाद की बात बड़ा सुन्दर शब्द है। मैं जितनी दूर तक जानता हूँ समाजवाद में सभी समान होते हैं, कोई ऊँच-नीच नहीं होता है। हर किसी आदमी का सिर इसलिए ऊँचा नहीं रहता है कि वह शरीर में सबसे ऊपर होता है और पैर धरती को स्पर्श करते हैं इसलिए नीच नहीं हो जाते। जैसे मानव देह में सभी अंग समान है, उसी तरह समाज में भी सभी सदस्य

(शेष पृष्ठ 3 पर)

कॉ. प्रभाष घोष का भाषण...

(पृष्ठ 2 का शेष)

समान होते हैं। यही है समाजवाद। इसमें राजपुत्र और किसान, अमीर और गरीब, पूँजीपति और मजदूर सभी एक ही स्तर पर हैं।' मतलब गाँधीजी के अनुसार समाज वर्ग-विभाजित होते हुए भी सभी समान हैं। दरअसल उनकी नजरों में 'सभी समान हैं' यह कहने का क्या मायने है? इसका मायने यह है कि कानून की नजरों में सभी समान हैं। हमारे देश के बुर्जुआ कानून में जिस तरह लिखा हुआ है कि सभी समान हैं, लेकिन असल में क्या पूँजीपतियों और मजदूरों का दर्जा समान है? यह है गाँधीजी की समाजवाद के बारे में अनौखी व्याख्या। गाँधीजी द्वारा वर्णित यह समाजवाद तो फिर सभी साम्राज्यवादी-पूंजीवादी देशों में कायम है—यह कहा जा सकता है! क्योंकि सभी जगह कानून की नजर में सभी समान हैं। गाँधीजी ने आगे कहा है कि 'भगवान ने पूँजीपतियों और मजदूरों, दोनों को ही पैदा किया हैं। पूँजीपति के पास है बौद्धिक शक्ति और मजदूरों के पास है शारीरिकश्रमशक्ति'। अन्य भाववादी बुर्जुआ दार्शनिकों की तरह गाँधीजी भी यह मानते थे कि समाज में अपने उन्नत बौद्धिक बल पर एक तबका तो सदा मालिक बना रहेगा और दूसरा अपनी शारीरिक श्रमशक्ति के अधिकारी होने से मजदूर बना रहेगा। उनके शब्दों में, यह स्थायी है, शाश्वत है। उन्होंने कहा था कि 'हम पूंजीपति मालिकों से निवेदन करते हैं कि वे खुद को सम्पति के ट्रस्टी समझें जिनके ऊपर आश्रित रह कर वे अपनी पूंजी बनाते हैं, रखते हैं और बढ़ाते हैं... यहां तक कि किसी तरह करोड़ों रुपये कमाओ लेकिन यह समझ लो कि आपकी धन-दौलत आपकी अपनी नहीं है, यह लोगों की है। अमीरों के पास उनकी धन-दौलत रहेगी, जिस में से वे अपनी खुद की तर्कसंगत न्यायसंगत जरूरत अनुसार इस्तेमाल करेंगे। बाकी हिस्से के वे ट्रस्टी के तौर पर समाज की जरूरत के लिए इस्तेमाल करेंगे'। क्या ऐसा कोई पूंजीपति है जो यह कहेगा कि कारखाने या कृषि उत्पादन से अर्जित धन-सम्पदा से जो उसने लिया है, वह 'तर्कसंगत' या 'कानूनसंगत' नहीं है। बल्कि उल्टे वह कहेगा कि मजदूरों का शोषण करके उसके द्वारा मुनाफा कमाना ही पूरी तरह 'तर्कसंगत' और 'न्यायसंगत' है। गाँधीजी का यह विश्वास था कि 'मिल मालिक और मिल मजदूरों का रिश्ता पिता-पुत्र का रिश्ता होगा, बल्कि पिता-पुत्र के समान प्रेम और श्रद्धा-सम्मान का रिश्ता होगा। गाँधीजी के आत्म शुद्धिकरण की लगातार कोशिश करके उन्होंने आत्मा की आवाज साफ और सही सही सुनने की क्षमता हासिल कर ली थी, उनके लिए जिसका तात्पर्य था कि 'मैं जो कुछ भी कह रहा हूँ, वह भगवान की वाणी हैं।' जरा सोच कर देखें कि इस 20 वीं सदी में उन्होंने लिखा : 'भगवान की आवाज मैं सुन सकता हूँ, मेरा यह दावा कोई नया नहीं है। ..... मैं जब यह आवाज सुनता हूँ, तब मैं सपना नहीं देख रहा होता हूँ। यह आवाज सुनने से पहले मेरे अन्दर एक भीषण संघर्ष होता है। अचानक यह आवाज मुझ में आती है। मैं ध्यान से इसे सुनता हूँ, निश्चित हो जाता हूँ कि यह वही आवाज है, उसके बाद संघर्ष बंद हो जाता है। मैं शांत हो जाता हूँ। .... यह आधी रात को 11-12 बजे के बीच होता है। मैं तरोताजा महसूस करता हूँ और इस बारे में नोट लिखना शुरू कर देता हूँ, जो पाठकों ने देखे होंगे। .... संशयवादियों को समझाने के लिए और कोई भी सबूत मेरे पास नहीं है। .... लेकिन मैं यह कह सकता हूँ कि अगर सारी दुनिया सर्वसम्मति से मेरे खिलाफ राय दे, तो भी मेरा यह विश्वास अटल रहेगा कि मैं भगवान की आवाज सुनता हूँ।' इसलिए गाँधीजी मानते थे कि 'चिन्तन ईश्वरीय मनन है'। उनका जो कुछ भी विचार और उपदेश है वह सब ईश्वरीय वाणी है और इसलिए अभ्रांत सत्य को दर्शाता है। यहाँ दर्शन शास्त्र के एक सिद्धांत की एक बात की चर्चा करने की जरूरत है जो विज्ञान द्वारा साबित किया हुआ है। चिन्तन का उद्गम कहाँ से है? भाव पहले है कि वस्तुजगत पहले है? चिन्तन क्या ईश्वर प्रदत्त है? धर्म प्रचारक अंधकारमय सुदूर अतीत की वास्तविक अवस्था के परिप्रेक्ष्य में यह विश्वास किया करते थे कि भाव या चिन्तन ईश्वर का दिया हुआ है, इसलिए उनके उपदेश भी ईश्वर द्वारा दिये हुए हैं। बाद में पूँजीवाद, नव जागरण और बुर्जुआ जनवादी क्रांति के अभ्युदय काल में बुर्जुआ ने ईश्वर के अस्तित्व, अपार्थिव जगत के अस्तित्व को नकार दिया, धार्मिक चिन्तन और मूल्यबोधों की जगह धर्मनिरपेक्ष या पार्थिव मानवतावादी दृष्टिकोण और मूल्यबोध आये। लेकिन चिन्तन के उत्स या स्रोत क्या है इसके बारे में धर्मनिरपेक्ष मानवतावाद के पैरोकार सही विज्ञान संगत जवाब नहीं दे पाये। इसका जवाब इतिहास में पहली बार महान मार्क्स ने दिया। उन्होंने भाववादी दार्शनिक हेगेल से अपना फर्क दर्शाते हुए कहा कि 'वस्तुजगत मानव के मन में प्रतिफलित होकर चिन्तन में रूपान्तरित हो जाता है।' उन्होने यह भी कहा कि 'सोच-विचार आदमी के अवस्थान को निर्धारित नहीं करती, उल्टे आदमी का सामाजिक अवस्थान ही उसकी सोच-विचार को निर्धारित करता है'।

था। इनमें से किसी के भी साथ सहमत न होकर कॉमरेड शिवदास घोष ने कहा था, ''वे एक ईमानदार और अत्यन्त शक्तिशाली व्यक्तित्व सम्पन्न आदमी थे।'' लेकिन इसके बावजूद गाँधीजी से यह भूल-भ्रांति क्यों हुई? कॉमरेड शिवदास घोष ने बताया, ''समाज के विकास और प्रगति के नियम को अस्वीकार कर वर्ग-विभाजित समाज में सभी लोगों का कल्याण, यानी दोनों वर्गों का एक साथ कल्याण करना चाहने के चलते ही एक ओर तो बुर्जुआ नैतिक मूल्यबोधों के आवेदन ने उनमें जनता के प्रति असीम ममता बोध पैदा कर दिया था और दूसरी ओर पूँजीपति वर्ग का क्रांति का डर भी साथ ही साथ उनकी चिंतनधारा में अनजाने में ही काम कर रहा था। नतीजतन वफादारी और ईमानदारी के साथ जन कल्याण की बात सोचते हुए भी जिस विचारधारा यानी 'गाँधीवाद' को उन्होने पैदा किया, उसने असल में पूँजीपति वर्ग के स्वार्थ की ही रक्षा की है और आज भी करता जा रहा है।'' वस्तुत:, इस पूँजीपतिवर्ग ने भी सचेत तौर पर गाँधीजी ओर गाँधीवाद को अपने वर्ग स्वार्थ में इस्तेमाल किया है—जिस बात को गाँधीजी समझ ही नहीं पाये। जैसे मिसाल के लिए, बहुत ही ईमानदार, तहेदिल से भला चाहने वाला, नेक, मरीज का हमर्दद कोई डाक्टर मुफ्त इलाज करता है, लेकिन चिकित्सा विज्ञान को नहीं जानता है। केवल ईमानदारी से वह मरीज को बचा नहीं सकेगा, मार डालेगा। गाँधीजी के मामले में भी यही हुआ है। उनके जीवन के आखरी दौर में देश के बंटवारे ने उनको बहुत व्यथा पहुँचायी थी। लेकिन वे इसकी वजह नहीं जान पाये। वे समझ नहीं पाये कि हिन्दू धर्मीय राष्ट्रवाद के प्रभाव के चलते आजादी आन्दोलन में मुस्लिम धर्मीय जनता शामिल नहीं हो पायी। उसका फायदा उठाकर ब्रिटिश साम्राज्यवाद और कट्टरपंथियों ने देश के बंटवारे की साजिश रची और उनके (गाँधीजी) के दाहिने हाथ तुल्य नेहरु और पटेल ने हड़बड़ी में सत्ता प्राप्त की लालसा से गाँधीजी के मत को भी अमान्य कर देश का बंटवारा करना मान लिया। बड़े दु:ख के साथ गाँधीजी ने अपने जीवन के आखिरी दौर में लिखा था, ''मेरी साधना व्यर्थ हो गई है। हिन्दू-मुसलमान भातृघाती दंगे में लगे हुए है। किसी ने मुझे नही समझा। समझा सिर्फ एक आदमी। आज वह भी मेरे पास नहीं है। वह है सुभाष .... आज मैं अकेला हूँ। यहाँ तक कि सरदार वल्लभ भाई पटेल और जवाहरलाल नेहरु का भी यह मानना है कि मैं स्थिति का जो विश्लेषण कर रहा हूँ, वह गलत है और देश का बंटवारा मान लेने से शांति वापस फिर कायम हो जाएगी।'' वैज्ञानिक दृष्टिकोण, इतिहास के नियम और वर्ग-संघर्ष को अस्वीकार करने के

उल्टे वह कहेगा कि मजदूरों को शोषण करके उसके द्वारा मुनाफा कमाना ही पूरी तरह 'तर्कसंगत' और 'न्यायसंगत' है। गाँधीजी का यह विश्वास था कि ''मिल मालिक और मिल मजदूरों का रिश्ता पिता-पुत्र का रिश्ता होगा, बल्कि पिता-पुत्र के समान प्रेम और श्रद्धा-सम्मान का रिश्ता होगा। गाँधीजी के इस सद् इच्छाजनिक कल्पित रिश्ते ने असल में मजदूरों के निर्ममता से होने शोषण-लूट का रूप ले लिया है। मजदूरों के हर प्रकार के प्रतिवाद को नृशंसता से दमन का रूप ले लिया है। गाँधीजी ने मालिक पूँजीपतियों को कहा था कि 'आपको जो सम्पत्ति मिली है, वह भगवान की दी हुई है'। गाँधीजी का यह भी मानना था कि कोई व्यक्ति निजी मालिकाने वक्फ बगैर धन-दौलत के अम्बार नहीं लगा सकता। उसे केवल यह सुनिश्चित करना है कि इसका दुरुपयोग न हो, बल्कि इसका जायज और सदुपयोग हो। निजी या पूंजीवादी मालिकाने की जबरदस्त हिमायत करते हुए उन्होंने साफ कहा था : 'मैं आपको आगाह करता हूँ कि पूँजीपतियों के खिलाफ मेरे मन कोइ विद्वेष नहीं है; मैं उन्को नुकसान पहुँचाने की बुरी बात कभी सोच भी नहीं सकता।... मैं उनका हृदय पिघलाना चाहता हूँ ताकि वे अपने कम भाग्यवाद भाइयों के लिए कुछ न्यायसंगत काम कर सकें'। 'मैं जमींदारों और पूँजीपतियों को अहिंसा के रास्ते से बदल देना चाहता हूँ। इसलिए मेरे लिए वर्ग-संघर्ष की अनिवार्यता जैसी कोई चीज नहीं है।' उन्होंने यह भी कहा है कि 'हमारा समाजवाद या साम्यवाद अहिंसा पर आधारित होगा और पूँजी और श्रम, जमींदारों और मुजारों के बीच अहिंसक व सद्भावपूर्ण सहयोग पर आधारित होगा'। आइये एक बार भारत की ओर नजर डाल कर देखें कि वर्ग-संघर्ष वर्जित गाँधीजी के आकांक्षित 'समाजवाद और समतावाद' ने क्या रूप ले लिया है! उनके कल्पित ट्रस्टियों ने एकाधिकारी पूँजी, कारपोरेट पूँजी और वित्तीय पूँजी का रूप ले लिया है। गाँधीजी जिन्दा नहीं रहे, इसलिए गाँधीजी के चेलों में से कौन कैसे इस ट्रस्टीशिप पर अमल कर रहा है, यह देखने का मौका उन्हें मिला नहीं। देखते तो उन जैसा ईमानदार आदमी निश्चय ही दु:ख-दर्द से छटपटा रहा होता। दूसरी ओर गाँधीजी ने कहा है, 'यहाँ तक कि अगर मुझे आश्वस्त भी करा दिया जाता कि हथियारबंद संघर्ष से आजादी आयेगी, तो भी मैं उसे ठुकरा देता क्योंकि वह असली आजादी नहीं होती।' मैंने ये जो बातें आपको बतायी ये सब गाँधीजी की कही हुई हैं। इसी स्थिति की वजह से गाँधीजी ने भगतसिंह को बचाने की कोशिश नहीं की। इसी वजह से गाँधीजी ने सुभाष चन्द्र बोस को कांग्रस अध्यक्ष नहीं बने दिया और आखिरकार उन्हें निष्कासित करने का रास्ता साफ कर दिया। क्योंकि हथियारबंद क्रांति गाँधीजी के लिए एक दुस्स्वप्न था। वे इसकी इजाजत नहीं दे सकते थे। गाँधीजी सोचते थे कि मानव के मन में प्रतिफलित होकर चिन्तन में रूपान्तरित हो जाता है।' उन्होने यह भी कहा कि 'सोच-विचार आदमी के अवस्थान को निर्धारित नहीं करती, उल्टे आदमी का सामाजिक अवस्थान ही उसकी सोच-विचार को निर्धारित करता है'।

बाद में विज्ञान के ताजातरीन आविष्कारों केआधार पर कॉमरेड शिवदास घोष ने धारणा विकसित की थी। उन्होंने दिखाया था, ''भाव, चिंतन-विचार पहले आया है कि वस्तु, यानी भाव या वस्तु में से कौन सा पहले (प्रायर) है, इसको लेकर विज्ञान में यह प्रायरिटी का मामला आज सन्देहातीत रूप से सुलझाया जा चुका है। साबित हो चुका है कि वस्तु मानव की चेतना से निरपेक्ष रूप से अवस्थान करती है। पाँच ज्ञानेन्द्रियों के जरिए बाहरी दुनिया और वास्तविक परिवेश मानव के मस्तिष्क पर जो घात-प्रतिघात करता है, वही मानव के मस्तिष्क की जो विशेष क्षमता है—जिसे पावर ऑफ ट्रान्सलेशन ऑफ दि ह्युमैन ब्रेन कहा जाता है—उसे आधार करके ही चिन्तन और भाव का जन्म हो रहा है''। उन्होंने यह भी कहा था कि ''..... सभी लोगों के चिन्तन की मेटीरियल कन्डीशन (वास्तविक परिवेश) पहले तैयार होता है, फिर उसके भावजगत की सृष्टि होती है। यहीं मानव की चिन्तन शक्ति की सापेक्ष स्वतंत्रता की सीमा है। ... . इस कथन को जो नकारेंगे उनको मेरे इस सवाल का जबाव देना होगा कि बुद्ध की ज्ञान बुद्धि आइन्स्टीन से कम होने की वजह से क्या उनके लिए थ्यूरी ऑफ रिलेटीविटी या इलेक्ट्रो मैग्नेटिक फिल्ड सम्बन्धी विभिन्न सिद्धांत खोजना सम्भव नहीं हुआ? अथवा यूरोप के मानवतावादी जो जनतांत्रिक चिन्तन-चेतना के उद्गाता थे, या कार्ल मार्क्स जो इससे भी उन्नत चिन्तन के अर्थ में वैज्ञानिक समाजवाद के उद्गाता थे—वे सब क्या बुद्ध, शंकराचार्य, सुकरात जैसे लोगों से काफी ज्यादा प्रतिभावान थे इसलिए वे ये सब कर पाये? इस तरह के चिन्तन से मैं बिल्कुल सहमत नहीं हूँ। मेरा मानना है कि विभिन्न युग के चिन्तनकार अपने-अपने युग के श्रेष्ठ चिन्तनकार होने के बावजूद वे युग की सीमा, स्थान-काल-परिवेश की सीमा का अतिक्रमण नही कर पाये।'' इस सीमा के प्रसंग में कॉमरेड शिवदास घोष ने यह भी कहा है कि ''यह सीमा दो जगह होती है। एक है वास्तविक परिवेश और दूसरी है चिन्तन प्रक्रिया। यानी हरेक व्यक्ति के अन्दर जिस प्रक्रिया से उसके जाने-अनजाने उसकी चिन्तन पद्धति निर्मित हुई है, उसी प्रक्रिया के द्वारा उसके मन या चिन्तन की स्वतंत्रता सीमाबद्ध है।' 'उन्होंने बताया था कि 'व्यक्ति चिन्तन सामाजिक चिन्तन का ही व्यक्तिकरण है।' उस जमाने में ज्यादातर लोग गाँधीजी को 'अवतार' मानकर अंधे की तरह उनका अनुसरण करते थे। फिर कुछ तथाकथित मार्क्सवादी लोगों ने गाँधीजी को 'हिपोक्रट' (पाखण्डी) बताया जवाहरलाल नेहरु का भी यह मानना है कि मैं स्थिति का जो विश्लेषण कर रहा हूँ, वह गलत है और देश का बंटवारा मान लेने से शांति वापस फिर कायम हो जाएगी।'' वैज्ञानिक दृष्टिकोण, इतिहास के नियम और वर्ग-संघर्ष को अस्वीकार करने के चलते एक किसी महापुरुष की भी कितनी त्रासदीपूर्ण परिणति हुई। सभी बुर्जुआ पार्टियाँ 'गाँधीवाद गाँधीवाद' का नाम जपती हैं, क्योंकि इससे उन्हें बहुत बड़ी सुविधा है। गाँधीजी के प्रति जनता का एक अंध आवेग है, उससे वे फायदा उठाना चाहती हैं और इसके जरिए पूँजीवाद को बचाना चाहती हैं। इनके लिए 'गाँधीवाद' एक सुविधा के सिवाय और कुछ नहीं हैं। कोई उनकी ईमानदारी के नजदीक भी नहीं फटकता है, लेकिन जनता को ठगने के लिए सीधासादा जीवन, साधारण धौती-साड़ी, फटा जुता पहने ये सब ढोंग करते फिरते हैं।

गाँधीवाद के सहारे उस जमाने में फिर भी जो ईमानदारी थी, आज वह भी नहीं है, आज वह रह भी नहीं सकती। पहली बात तो यह है कि उस जमाने में धार्मिक नैतिकता के कुछ अवशेष बचे हुए थे, सर्वोपरि बुर्जुआ राष्ट्रवाद प्रगतिशील था। उस समय राष्ट्रीय आजादी आन्दोलन ने एक नैतिक बल दिया था। अब वह नहीं है। आजकल कोई व्यक्ति ईमानदारी से रहना चाहे, विवेक, जमीर को बचाकर रखना चाहे तो उसे हर पल अन्याय के खिलाफ लड़ना पड़ेगा। वरना उसे समझौता करना ही पड़ेगा। क्योंकि पूरा सिस्टम ही भ्रष्टाचारग्रस्त है, यह व्यवस्था सड़-गल चुकी है। यह समाज जितने दिन टिका रहेगा इन्सानियत और भी मरेगी। पारिवारिक जीवन की ओर नजर डालकर देखिये, बुढ़े माँ-बाप की जिम्मेदारी सन्तान नहीं ले रही है, पति-पत्नी का संबंध भी टूटता जा रहा है, स्नेह माया ममता नहीं है। व्यक्ति मालिक का लाभ ही चरम लक्ष्य है, इसलिए सामाजिक जीवन में व्यक्ति केन्द्रीकता भी पराकाष्ठा पर है। नीति मूल्यबोध कुछ काम नहीं कर रहे हैं। शराब पीयो, गाँजा पीयो, मौज करो, नारीदेह को लेकर गन्दी बातें करो, यही सब तो युवा समाज में चल रहा है, जिस पूँजीवाद ने गाँधीवाद को इस्तेमाल किया है, आज भी कर रहा है। इसलिए यह जो भ्रष्टाचार है, जो यह मानते हैं कि सिर्फ एक कानून पास करने से ही बंद हो जाएगा, उनसे मैं सहमत हूँ। मजदूर क्रांतिकारी विचारधारा से संचालित जनआन्दोलन ही केवल इस संस्थानीकृत भ्रष्टाचार को लगाम लगा सकता है। कानून को लागू करवाने के लिए भी तो जनआन्दोलन चाहिए। सर्वोपरि स्थायी तौर पर भ्रष्टाचार को समाज से दूर करना है तो पूँजीवादी व्यवस्था को उखाड़ फेंकना चाहिए।

(शेष पृष्ठ 4 पर)

कॉ. प्रभाष घोष का भाषण...

(पृष्ठ 3 का शेष)

सीपीएम का विचित्र मार्क्सवाद!

अब आइये देखें, इस भ्रष्टाचार के सवाल पर मार्क्सवादी पार्टी होने का अपने बारे में दावा करने वाली सीपीएम पार्टी के अखिल भारतीय अंग्रेजी साप्ताहिक 'पीपुल्स डेमोक्रसी' के 1 जून, 2011 को प्रकाशित अंक के सम्पादकीय में क्या कहा गया है। आपको पढ़कर सुनाता हूँ, मैं बाद में अपनी बात कहूँगा। इसमें कहा गया है, '.... सीपीआई (एम) इस बात को बराबर कहती आई है कि ऊपर वाले हलकों में भ्रष्टाचार का अगर तहे दिल से मुकाबला करना है तो राजनैतिक पार्टियों को कारपोरेट फण्डिंग पर पाबन्दी लगानी होगी। इस तरह की फण्डिंग या पैसा देने को कारपोरेट क्षेत्र चूँकि अपने पूँजीनिवेश के तौर पर देखता है, इसलिए यह राजनैतिक भ्रष्टाचार का एक महत्वपूर्ण मूल कारण है। कारपोरेट क्षेत्र अवश्य ही हमारे देश की जनतांत्रिक व्यवस्था को ताकतवर और मजबूत करने के लिए धन दे। इस मकसद से उनका दिया हुआ पैसा चुनाव में सरकारी फण्डिंग के तौर पर खर्च करने के लिए चुनाव आयोग के अख्तियार में या सरकार अगर कोई और प्रतिष्ठान तय करे तो वहाँ जमा रखा जा सकता है।' एकाधिकारी पूँजी या कारपोरेट सेक्टर शासक पार्टियों का चुनाव फण्ड जुटाता है–यह बात सर्वविदित है और यह बंद होना चाहिए। लेकिन क्या यही इस देश के इस सर्वग्रासी भ्रष्टाचार के लिए जिम्मेदार है? पूँजीवादी व्यवस्था क्या जिम्मेदार नहीं है? इसके अलावा कानून बनाकर क्या यह पैसा लेना बंद किया जा सकता है, अगर नहीं तो राजनैतिक पार्टियाँ उसे लेना बंद क्यों नहीं करती? अगर चुनाव आयोग या सरकार के जरिए राजनैतिक पार्टियाँ एकाधिकारी पूँजीपतियों यानी कारपोरेट सेक्टर से पैसा लेती हैं, तो राजनैतिक पार्टियों और नेताओं का भ्रष्टाचार से ग्रस्त होना बंद कैसे होगा? इस तरह पैसा लेने में सीपीएम वालों को भी एतराज नहीं हैं, अवश्य ही उन्हें अभी भी यह पैसा मिलता है। लेकिन कारपोरेट सेक्टर अलहदा ढंग से ही दे या सरकार के जरिए ही राजनैतिक पार्टियों को पैसा दे, वह किस उद्देश्य से यह पैसा देगा? उसमें क्या कोई वर्ग स्वार्थ नहीं है? इस कारपोरेट सेक्टर पर सीपीएम वालों को कितनी जबरदस्त आस्था है, यह तब समझ में आता है जब वे उनसे आवेदन करते हैं कि 'देश की जनतांत्रिक व्यवस्था' को मजबूत करने के लिए मानो वे अवश्य ही मदद करते हो। यानी कारपोरेट गया, बल्कि इसके विपरीत नये–नये बने अमीरों से संबंध बढ़ गया'। सीपीएम वालों में से अगर कोई यहाँ इस सभा में हो, तो कृपा करके ये बाते सुन ले। इसके बाद 19 जुलाई को गणशक्ति का सम्पादकीय लिखता है, 'इन कमजोरियों में हैं प्रशासन, पंचायत, नगर निगम संचालन में वर्ग दृष्टिकोण की कमी'। गौर कीजिए, इन्होंने इन 34 साल में जो सरकार, पंचायतें, नगर निगम चलाये है, उनमें मजदूर वर्ग का दृष्टिकोण नहीं था! तब तो क्या मामला उठ खड़ा होता है? हालाँकि मैं जानता हूँ उन्होंने इन बातों का तात्पर्य समझकर ही लिखा है या आत्म मंथन कर रहे हैं, यह नहीं है। अब सत्ता से हट जाने पर पार्टी की हालत खराब है। सरकार में थे तब फूले नहीं समाते थे, अब पिचक से गये हैं। इसलिए कार्यकर्ताओं को प्रोत्साहित करना है, तो 'वर्ग संघर्ष', 'क्रांति' ये जो शब्द वे 34 साल में भूल गये थे, उन्हें फिर दोबारा लेखों, भाषणों, बातों में लाना होगा। उसकी खातिर ही ये बाते कही गई हैं। लेकिन इससे उनकी पार्टी का वर्गचरित्र क्या हो जाता है? 34 साल के शासन में सरकार, पंचायतों, नगर निगमों के संचालन में सीपीएम पार्टी ने मजदूर वर्ग के दृष्टिकोण के मुताबिक काम नहीं किया। जबकि वर्ग विभाजित समाज में या तो मजदूर वर्ग का, नहीं तो पूँजीपतिवर्ग का दृष्टिकोण रहेगा। यह तो मार्क्सवाद का प्राथमिक ज्ञान है। तब फिर उनकी कही बातों के मुताबिक मामला क्या बन जाता है? मजदूर वर्ग का दृष्टिकोण नहीं रहने से सरकार, प्रशासन, नगरनिगम, पंचायतें किस दृष्टिकोण से उन्होंने चलायी? निश्चय ही उन्होंने ये बुर्जुआ वर्ग के दृष्टिकोण से चलायी। पश्चिम बंगाल और केरल में भी उनकी सरकार थी। ऐसा होने पर भी हम इतने दिनों से जब यह कहा करते थे कि आप देशी–विदेशी पूँजीपतियों के होकर काम कर रहे हो, तब क्या हम गलत कहते थे? क्या दुष्प्रचार करते थे? हमने तो यही आरोप लगाया था कि आपकी सरकार कांग्रेस, बीजेपी की तरह ही देशी–विदेशी पूँजी की ताबेदार होकर काम कर रही है। आप वर्ग–संघर्ष को ध्वस्त कर रहे हो, मजदूर–किसानों के आन्दोलन को तोड़ रहे हो, आम आदमी को वर्ग संघर्ष से विमुख कर रहे हो। आपकी पार्टी ने गरीबी से कट कर अमीरों के साथ संबंध घनिष्ठ बना लिये हैं, आज आप खुद ही यह बात कह रहे हो। इस बार आप से पूछता हूँ किआपकी पार्टी ने यानी पहले अविभाजित सीपीआई और बाद में सीपीएम ने क्या कभी मजदूर वर्ग के दृष्टिकोण के अनुसार काम किया था? क्या इतिहास से एक भी दृष्टान्त वे दिखा सकेंगे? आजादी आन्दोलन के जमाने में खुद स्टालिन ने कहा था कि भारतीय राष्ट्रीय बुर्जुआ वर्ग दो भागों में विभक्त है, एक

फिर 1947 में सत्ता हस्तान्तरण के बाद पहले तो कुछ दिन भारत आजाद हुआ है कि नहीं–इस विषय में उनमें भ्रांति व्याप्त रही। भारतीय राज्यसत्ता के वर्ग चरित्र की उन्होंने एक विचित्र व्याख्या दी थी–'बुर्जुआ लैण्डलोर्ड स्टेट हेडिड बाई बिग बुर्जुआजी'। हू इज दैट बिग बुर्जुआजी? या तो मोनोपोली बुर्जुआजी कहो, या नॉन–मोनोपोली बुर्जुआजी कहो। यह बिग या मोनोपोली बुर्जुआ यानी बड़े या एकाधिकारी पूँजीपति कौन हैं? ये क्या लेनिन की व्याख्या के अनुसार राष्ट्रीय बुर्जुआ या पूँजीपति से ऊँचे स्तर के नहीं हैं? ये लैण्डलोर्ड (भूस्वामी) कौन हैं ये जमींदार है या जोतदार? भारत की कृषि में तो पूरी तरह पूँजीवाद का प्रवेश हो चुका है–यह बात आप खुद ही कह रहे हो। जबकि, रणनीति में कह रहे हो साम्राज्यवाद और सामन्तवाद के खिलाफ क्रांति यानी जनगणतांत्रिक क्रांति। फिर तो यह कहा जा सकता है कि नवम्बर 1917 में लेनिन ने रूस में समाजवादी क्रांति का आह्वान करके गलती की थी। क्योंकि, लेनिन ने ही कहा था कि उस समय रूस में सामन्तवाद और विदेशी पूँजी का काफी प्रभाव बचा हुआ था। पूँजीवाद अनुन्नत था, लेकिन चूँकि फरवरी में बुर्जुआ वर्ग ने राज्यसत्ता पर कब्जा कर लिया था, इसी वजह से लेनिन ने कहा था कि टू दैट एक्सटेन्ट बुर्जुआ डेमोक्रेटिक रेवोल्यूशन इज कम्पलीटिड इन रशिया। इसी वजह से क्रांति का स्तर समाजवादी था। 1916 में ही लेनिन ने 'साम्राज्यवाद, पूँजीवाद की चरम अवस्था' लेख में यह बात भी कही थी कि साम्राज्यवादी युग में पूरी तरह स्वतंत्र बुर्जुआ देश में भी विदेशी वित्तीय पूँजी आधिपत्य जमाये रखती है। 1920 में तीसरे इन्टरनेशनल की सभा में बोला था कि अमेरिका, फ्रांस, जर्मनी जैसे विकसित पूँजीवादी देशों में भी कृषि में सामन्तवाद के अवशेष रह गये हैं। लेनिन की इस महत्वपूर्ण सीख की कसौटी पर सीपीएम का सिद्धांत कहाँ टिकता है? यह बात कहना गलत नहीं होगा कि सीपीएम ने वास्तव में लेनिन के सिद्धांत का ही विरोध किया है। इसी सिद्धांत को लेकर ही वे वर्षों से काम करते जा रहे हैं। इस सिद्धांत को वास्तव में अमल में लाने का मतलब है राष्ट्रीय बुर्जुआ वर्ग से और गाँवों के धनी किसानों से दोस्ती। उनका यह सिद्धांत भारतीय समाज में पूँजीपति वर्ग और मजदूर वर्ग के बीच मूल द्वन्द्व के खिलाफ जाता है। इसलिए सीपीएम, सीपीआई सुधारवादी (रिफोर्मिस्ट), संशोधनवादी (रिविजनिस्ट) हो गई हैं। इसी वजह से उनकी नजरों में नेहरू प्रगतिशील हो गये थे और पटेल प्रतिक्रियावादी; इन्दिरा प्रगतिशील और मोरारजी प्रतिक्रियावादी हो गये थे, चूँकि उनके सिद्धांत में राष्ट्रीय पूँजीपति

इस कारपोरेट सेक्टर पर सीपीएम वालों को कितनी जबरदस्त आस्था है, यह तब समझ में आता है जब वे उनसे आवेदन करते हैं कि 'देश की जनतांत्रिक व्यवस्था' को मजबूत करने के लिए मानो वे अवश्य ही मदद करते हो। यानी कारपोरेट सेक्टर, एकाधिकारी पूँजी है इस देश की 'जनतांत्रिक व्यवस्था' को ताकतवर और मजबूत करने वाली ताकत। हाँ, एक मायने में यह बात ठीक है। देश में 'जनतांत्रिक व्यवस्था' के नाम पर पूँजीवाद के स्वार्थ में जो प्रशासनिक फासीवादी व्यवस्था चल रही है, वह तो एकाधिकारी पूँजी के स्वार्थ में ही है और वे उसे तो ताकतवर और मतबूम करेंगे ही। जबकि कितने साल पहले लेनिन ने कहा था कि पूँजीवाद अब जनतंत्र और आजादी की बजाय ब्युरोक्रेसी और मिलीटरी पर निर्भरशील है। स्टालिन ने कहा था कि जनतंत्र के परचम को पूँजीवाद ने धूल में फेंक दिया है। इसके अलावा कॉमरेड शिवदास घोष ने कहा था, '' 'जनतंत्र' के नाम पर देश-देश में फासीवाद कायम हो गया है।'' अत: समझ लीजिए, सीपीएम किस तरह मजदूर वर्ग की स्वार्थरक्षक पार्टी है! इनका मार्क्सवाद कितना विचित्र है! इस सम्पादकीय के बाद के अंश में जो लिखा हुआ है, वह भी हैरतअंगेज है। उन्होंने लिखा है कि नाना घोटालों से जो अकूत धन लूटा हुआ है, वह खाद्य निरापदता, शिक्षा, स्वास्थ्य के मद में खर्च किया जाने से 'भारत गुणात्मक रूप से' भिन्न होता, 'जनता बेहतर गुजर-बसर कर पाती।' जनता की दुर्दशा से कुछ राहत मिल पाती, यह कहना एक बात है, जबकि 'भारत गुणात्मक रूप से भिन्न होता' यह कहना बिल्कुल अलग बात है। कोई भी सही मार्क्सवादी पार्टी यह बात नहीं कह सकती।

सीपीआई-सीपीएम किसी समय मजदूर वर्ग का दृष्टिकोण लेकर नहीं चली

सीपीएम के मार्क्सवाद के कुछ और भी नमूने मैं आपके सामने उन्हीं के लेखों से ही बताऊँगा। चुनावी उल्टफेर के कारण को लेकर उनके बंगाली भाषा के मुखपत्र 'दैनिक गणशक्ति (6 जुलाई' 11) के अंक से सुनिए। उनके एक सिद्धांतकार नेता लिख रहे हैं कि–'हमने' मतलब सीपीएम ने 'संघर्ष के मैदान से लोगों को हटा कर वर्ग संघर्ष से विमुख कर डाला था'। यानी उन्होंने अपने 34 साल के शासनकाल में लोगों को वर्ग-संघर्ष से विमुख कर दिया है। इसके बाद वे लिख रहे हैं, 'दूसरी ओर 34 साल के लम्बे अर्से तक सरकार चलाते रहने के कारण, खासकर उदारीकरण के दौर में एक अंश 'हड़प लेने' की मानसिकता से संचालित हो गया। इसके लिए ठेकेदारी, प्रामोटरी (प्रोपर्टी डीलरी), भाई भतीजावाद सहित विभिन्न अनैतिक कामों में लग गया'। इसके बाद गौर कीजिए, वे लिए रहे है–केवल इतना ही नहीं कि गरीबों के साथ रोजमर्रे का नाता कमजोर हो में सीपीएम ने क्या कभी मजदूर वर्ग के दृष्टिकोण के अनुसार काम किया था? क्या इतिहास से एक भी दृष्टान्त वे दिखा सकेंगे? आजादी आन्दोलन के जमाने में खुद स्टालिन ने कहा था कि भारतीय राष्ट्रीय बुर्जुआ वर्ग दो भागों में विभक्त है, एक समझौतापरस्त, और एक समझौताहीन, जुझारू। यानी एक ओर तो मजदूर क्रांति से भयभीत साम्राज्यवाद के साथ समझौतापरस्त दक्षिणपंथी नेतृत्व था, और दूसरी ओर था समझौताहीन क्रांतिकारी नेतृत्व। उन्होंने इस देश के कम्युनिस्टों से कहा था कि आपका काम है इन बुर्जुआ वर्ग के दो भागों में से जो भाग क्रांतिकारी है उसके साथ एकताबद्ध हो जाना और जो भाग समझौतापरस्त है उसे जनता से अलग-थलग कर देना। जो काम चीन में महान माओ त्से-तुंग ने किया था। हमारे देश में यही था उस जमाने में सही वर्ग दृष्टिकोण। जबकि आपने उस समय क्या किया? आप समझौताहीन क्रांतिकारी नेताजी सुभाष चंद्र बोस के खिलाफ समझौतापरस्त गाँधीवादियों का समर्थन कर रहे थे। कांग्रेस से निष्कासित होकर सुभाषचंद्र बोस ने रामगढ़ में जब अलग कॉन्फ्रेन्स बुलायी थी, यह कहकर कि लेफ्ट कन्सोलीडेशन होने से देश में कम्युनिस्ट आन्दोलन मजबूत होगा तब आपने सुभाषचंद्र बोस का साथ नहीं दिया, कितना बड़ा मौका गवाँकर कार्यत: समझौतापरस्त बुर्जुआ नेतृत्व की ही मदद की। यही तो था उन दिनों आपका वर्ग संघर्ष का सिद्धांत। 1939 में 'हिन्दू एक राष्ट्र है, मुस्लिम एक राष्ट्र है' यह सिद्धांत देकर अविभाजित सीपीआई ने पाकिस्तान की माँग का समर्थन किया था। सिद्धांतकार नेता रणदिवे साहब के खुद के लेखों में यह विचित्र मार्क्सवादी सिद्धांत पेश किया गया था कि कल्चर (संस्कृति), ट्रेडीशन (परम्परा), कस्टम (रीति-रिवाजों) में मुस्लिम एक अलग राष्ट्र हैं। यह क्या वर्ग-संघर्ष का दृष्टिकोण था? सन 1942 के अगस्त आन्दोलन (भारत छोड़ो आन्दोलन) ने सारे भारत में आग सुलगा दी थी। ऐसी एक स्थिति में उस समय आप (अविभजित सीपीआई वालों) ने ब्रिटिश साम्राज्यवादियों के साथ सहयोग किया था। दलील क्या थी? यही कि चूँकि फासिस्ट ताकतों के खिलाफ रूस के साथ ब्रिटेन की संधि हुई है। अंधे की तरह उसका अनुसरण करते हुए सीपीआई-सीपीएम ने ब्रिटिश साम्राज्यवाद का साथ दिया था। कॉमरेड स्टालिन ने कभी भी ऐसी सलाह नहीं दी थी। दूसरे विश्व युद्ध के समय सुभाषचंद्र बोस टेक्टीकल मूव (रण कौशल गत पैंतरे) के तौर पर जापान की मदद लेने गये थे। यह गलत था या सही, यह अलग बात है। लेकिन आपने सुभाषचंद्र बोस को जापान का दलाल के रूप में पेश किया था। ऐसा होने से समग्र स्वाधीनता संग्राम के दौरान किस सवाल पर वर्ग-संघर्ष का दृष्टिकोण या मजदूर वर्ग का दृष्टिकोण था?

सुधारवादी (रिफोर्मिस्ट), संशोधनवादी (रिविजनिस्ट) हो गई हैं। इसी वजह से उनकी नजरों में नेहरू प्रगतिशील हो गये थे और पटेल प्रतिक्रियावादी; इन्दिरा प्रगतिशील और मोरारजी प्रतिक्रियावादी हो गये थे, चूँकि उनके सिद्धांत में राष्ट्रीय पूँजीपति वर्ग के साथ एकता होनी चाहिए और ये लोग उनकी धारणा के अनुसार उस समय राष्ट्रीय पूँजीपति वर्ग की महत्वाकांक्षा (एस्पीरेशन) के प्रतिनिधि थे। इस सिद्धांत के अनुसार 1974-75 में सीपीएम इन्दिरा के साथ सांठगांठ रखते हुए इस बहाने जे पी आन्दोलन में नहीं उतरी कि इसमें जनसंघ है, जिसका फायदा उठा कर बीजेपी ने शक्ति अर्जित की। फिर 1977 में जिस जनता पार्टी में जनसंघ थी, उसी के साथ हाथ मिलाकर सीपीएम ने चुनाव में भाग लिया, वोट माँगे। कभी साम्प्रदायिकता के खिलाफ हौआ खड़ा करके कांग्रेस के साथ एकता, तो कभी कांग्रेस की तानाशाही का हौआ खड़ा करके बीजेपी के साथ हाथ मिला कर वीपी सिंह को सरकार बनाने में मदद की, कांग्रेस से हाथ मिला कर देवगौड़ा को, आई. के. गुजराल को सरकार बनाने में बैंकिंग की। बाद में प्रथम यूपीए को सपोर्ट कर आये। यह सभी 'बुर्जुआ लैण्डलोर्ड स्टेट हेडिड बाई बिग बुर्जुआजी' राज्य सत्ता के वर्ग चरित्र की इस व्याख्या और 'हाऊएवर आब्जेक्टिव ऑफ आवर रेवोल्यूशन रिमेन्स एन्टी इम्पीरियलिस्ट एण्ड एन्टी फ्यूडल' इस सिद्धांत की आड़ में। गणशक्ति लिखता है कि सीपीएम में 'संसद-सर्वस्वता का रुझान बढ़ता जा रहा है'। यह संसद-सर्वस्वता तो उनकी थीसिस को फालो (अनुसरण) करते हुए ही हुई है। जिस देश की राष्ट्रीय पूँजी, एकाधिकारी पूँजी और वित्तीय पूँजी को जन्म देकर सापेक्षत: अविकसित होते हुए भी साम्राज्यवादी स्तर पर पहुँच गई है, विश्व की एक महाशक्ति बनने की आकांक्षा लेकर चल रही है, उस देश में पूँजीवाद को मुख्य दुश्मन न मान कर जो लोग साम्राज्यवाद-सामन्तवाद के खिलाफ जनगणतांत्रिक क्रांति के सिद्धांत की रट लगाये हुए हैं, 'संसद सर्वस्वता का रुझान उनमें नहीं बढ़ेगा तो और किन में बढ़ेगा? उन्होंने तो संशोधनवादी गद्दार ख्रुश्चेव का सिद्धांत मान कर ही कह दिया है, 'पार्लियामेन्ट में बहुमत हासिल कर शांतिपूर्ण तरीके से पार्लियामेन्ट को जनता की इच्छा के यंत्र में तब्दील करके क्रांति करेंगे।' भारत को एक स्वतंत्र, सार्वभौम बुर्जुआ राष्ट्र मानकर और इस देश में प्रचलित पार्लियामेन्ट में बहुमत हासिल कर 'जनगणतांत्रिक क्रांति' सफल करेंगे, ऐसा ऊल जलूल सिद्धांत सिर्फ वे ही दे सकते हैं। अवश्य ही शुरूआत से यह सिद्धांत वे विभ्रांति से लेकर चलने से भी अब वह नेताओं की राष्ट्रीय पूंजीपतियों के साथ सांठगांठ करने की सुविधा के तौर पर इस्तेमाल हो रहा है।

(शेष पृष्ठ 5 पर)

कॉ. प्रभाष घोष का भाषण...

(पृष्ठ 4 का शेष)

ऐसे में सवाल उठता है कि जिस पार्टी में शुरूआत से ही मजदूर वर्ग का दृष्टिकोण काम नहीं करता है, वह पार्टी क्या मजदूर वर्ग की पार्टी मानी जा सकती है? सीपीएम के कार्यकर्ता जरा सोच-विचार करके देखें।

सीपीएम के नेताओं से मुँह से नीति-नैतिकता की बातें शोभा नहीं देती

इसी दिन के गणशक्ति अखबार में यह भी कहा गया है कि कम्युनिस्ट नीति-नैतिकता रक्षा में उनकी पार्टी में कमी आ गई है। मैं यह पूछना चाहता हूँ कि एकताबद्ध सीपीआई हो या सीपीएम हो, कम्युनिस्ट नैतिकता कह कर जो कुछ है, वह क्या होती है यह क्या उन्होंने कभी सोचा है? इसको लेकर क्या दिमाग खपाया है, माथापच्ची की है? कम्युनिस्ट नीति-नैतिकता तक की भी चर्चा की है? वरना 50 और 60 के दशक में सीपीआई की शक्ति में इतनी वृद्धि हुई थी, बाद में सीपीएम की शक्ति में इतनी बढ़ोतरी दिखाई दी थी, सन 77 से तो उनकी शक्ति जबरदस्त बढ़ी है, फिर भी पश्चिम बंगाल के सामाजिक माहौल में नैतिकता का यह हाल क्यों है? कोई पार्टी सही मायने में क्रांतिकारी हो, प्रगतिशील हो, उस पार्टी की ताकत बढ़ने से तो छात्र-नौजवानों का नैतिक स्तर बढ़ेगा। जब 34 साल तक आपकी ताकत बढ़ी है इसका मायने है शराब, सट्टा, जुआ, नारी अपहरण, महिलाओं से बलात्कार, कमर मटका कर नाच, इन्कलाब जिन्दाबाद के नारों के साथ शराबखोरी-नशाखोरी बढ़ी है। आपके बारे में यह समालोचना बहुत दिनों पहले ही कॉमरेड शिवदास घोष ने की थी। कांग्रेस, बीजेपी इस देश में फिल्म स्टारों, क्रिकेट प्लेयरों को हीरो बनाकर राजनीति कर रही हैं, इस राज्य में भी सीपीएम वही ले आयी है, अब तृणमूल भी उसी तरह कर रही है। क्या स्वदेशी आन्दोलन के जमाने में यह सब था? तब क्या बड़े-बड़े नाटककार, फिल्म स्टार, खिलाड़ी नहीं थे? उनको सामने रखकर क्या देश में चरित्र निर्मित हो उठेगा? ये सब राजनैतिक नेता जितने दिवालिया होते जा रहे हैं? उतने ही ये सब हल्केपन पर आश्रित होते जा रहे हैं। कम्युनिस्ट नीति-नैतिकता काफी ऊंचे दर्जे की होती है। आजादी आन्दोलन में मानवतावादी नैतिकता थी—देश का हित बड़ा व्यक्ति का हित गौण। 'मेरा देश, मेरी माता' 'सबके वास्ते मैं हरेक के वास्ते, मैं दूसरों के वास्ते'— यह सब आह्वान था। लेना ही बड़ी बात नहीं होती। वे जिस तरह खुलेआम गलतियाँ स्वीकार करेंगे, उसी तरह गलतियों का कारण खोजेंगे, क्यों भूल हुई—यह भी खोजेंगे और उसे खुलेआम स्वीकार करेंगे और उसके बाद उन गलतियों से मुक्त होने के लिए संघर्ष करेंगे। उन्होंने कहा कि इसी से समझा जा सकता है कि कोई पार्टी सही मायने में मजदूर वर्ग की पार्टी है कि नहीं। क्या ऐसा सीपीएम नेताओं ने किसी दिन किया?

इस तरह विचार करते, तो समझ पाते कि अतीत की अविभक्त सीपीआई और बाद में इससे टूट कर बनी सीपीएम घोर पेटी बुर्जुआ (निम्न पूँजीवादी) पार्टी है। ये पार्टियाँ कभी मजदूर वर्ग की पार्टियाँ नहीं थी। दूसरे इन्टरनेशनल और ख्रुश्चेव , लिऊ श्याओ ची और देंग ने मार्क्सवाद का लबादा मुखौटा पहन कर जिस तरह मार्क्सवादी आन्दोलन को खत्म किया था—इस देश में वही काम इन्होंने भी किया है। जबकि पेटी बुर्जुआ राजनीति तो लेनिन के शब्दों में बुर्जुआ राजनीति का अभिन्न हिस्सा है। उन्होंने असल में यही राजनीति की है। यही वजह है कि सही मार्क्सवादी पार्टी के तौर पर कॉमरेड शिवदास घोष को एसयूसीआई (सी) बनानी पड़ी।

जनआन्दोलन के हित में तृणमूल कांग्रेस से एकता की

अब सीपीएम नेतृत्व ने हमारे पर जो आरोप लगाये हैं, उनके बारे में कुछ कहना चाहता हूँ। सीपीएम नेता पश्चिम बंगाल और अन्य राज्यों में हर जगह उनकी पार्टी के कार्यकर्ता—समर्थकों और वामपंथी हलकों में यह प्रचार कर रहे हैं कि हमने वामपंथी होते हुए भी दक्षिणपंथी तृणमूल कांग्रेस की सिंगूर-नंदीग्राम आन्दोलन और फिर लोकसभा व विधानसभा चुनावों में मदद की। वरना तृणमूल इस तरह नहीं उभर कर आ पाती। हालाँकि अखबारों में सरासर हमारे नाम का उल्लेख वे नहीं करते हैं, ऐसा करने से हमारी पार्टी का प्रचार हो जायेगा। वे मीडिया में कहते हैं कि सिंगूर-नदीग्राम में अफरा-तफरी फैलाने और वाम मोर्चे के खिलाफ साजिश रचने में तृणमूल की मदद एक 'उग्र वामपंथी पार्टी' और माओवादियों ने की है। यह सभी जानते हैं कि इस आन्दोलन में माओवादियों का कोई भी अस्तित्व नहीं था। यह भी साफ जाहिर है कि 'उग्र वामपंथी' कहने से उनका तात्पर्य हमारी पार्टी से है। उनकी नजरों में हम तो 'उग्र वामपंथी' ही हैं। वे एक और बात हमारे कार्यकर्ताओं से कह रहे हैं कि 'आपको तृणमूल के साथ जाने का अच्छा सबक मिल गया है, अब तक जिन दो सीटों पर जीतते आये उनमें से एक सीट हार गये, हमारे साथ आते तो और भी सीट बढ़ती'। सीपीएम के साथ जाने से सीट बढ़ती कि नहीं यह तृणमूल पैदा भी नहीं हुई थी। तृणमूल बनने के बाद भी उसके साथ हमारी कोई एकता नहीं थी। वह गाँधीवादी पार्टी है, वोट सर्वस्व पार्टी है। जबकि हमारी क्रांतिकारी पार्टी है, हम क्रांतिकारी लक्ष्य लेकर जनआन्दोलन करते हैं। हमारे बीच यह फर्क हमेशा था। लेकिन पहले पहल सिंगूर आन्दोलन और फिर नंदीग्राम आन्दोलन में निचले स्तर पर एकता कायम हुई। सभी जानते हैं कि सिंगूर और नंदीग्राम में आन्दोलन हमने ही शुरू किया था। अब यह भी मैं स्वीकार करूँगा कि हम अकेले-अकेले इस आन्दोलन को सफल नहीं कर पाते, हमारी वह ताकत नहीं थी। इस सिंगूर-नंदीग्राम में तृणमूल कांग्रेस ने जब आन्दोलन में आना चाहा तो हम सहमत हो गये, क्योंकि तृणमूल की सांगठनिक ताकत और माडिया की बैकिंग उसके पास थी। जनवादी आन्दोलन के हित में ही लेनिनीय शिक्षा के अनुसार हमने तृणमूल के साथ एकता की। पहले हमने पार्टीगत स्तर पर एकता नहीं की। नंदीग्राम-सिंगूर में एसयूसीआई(सी) और तृणमूल कांग्रेस की एकता—इस तरह नहीं हुई। हमारी पार्टी हमेशा जन कमेटी गठित कर आन्दोलन करती है। जनता जनकमेटियाँ बनाकर लड़ेगी, जनता ही स्वयं सेवक दस्ते तैयार करेगी, जनता खुद आन्दोलन का तरीका और रास्ता तय करेगी, पार्टी उनमें अपना विचार रखेगी, उनका मार्गदर्शन करेगी। भारत में जनआन्दोलन में यह एक नये तरह का दृष्टिकोण है जो कॉमरेड शिवदास घोष द्वारा लाया गया। आजादी आन्दोलन के समय से यह दस्तूर था कि पार्टी फैसला करेगी और जनता उसे मान कर चलेगी, नेता योजना तैयार करेंगे और पब्लिक उसे अमल में लायेगी। लेकिन इसमें जनता को राजनीतिक रूप से अंधी व निष्क्रिय रखा जाता है। हमारी पार्टी चाहती है कि आम लोग उपयुक्त राजनीतिक चेतना हासिल करें, राजनीति समझें, चर्चा करें, उचित योजना बनाकर फैसले लें। यह न तो सीपीएम की राजनीति है और न ही तृणमूल की। हमारे जोर देने पर तृणमूल को यह प्रस्ताव मानना पड़ा। उसके नतीजे के तौर पर ही हमारे दोनों पार्टियों के संयुक्त नेतृत्व में सिंगूर कृषि भूमि रक्षा कमेटी और नन्दीग्राम भूमि उच्छेद प्रतिरोध कमेटी गठित हुई थी। आम जानते हैं कि इससे पहले तृणमूल ने आन्दोलन की प्रकृति क्या रही है। बस उसने पदयात्रा, धरना, अनशन और सभा-सम्मेलन के अलावा और क्या किया है? कोई संगठित दीर्घस्थायी आन्दोलन तृणमूल ने आज तक क्या कहीं किया है? क्या अब तक इस तरह के आन्दोलन से कोई माँग वह हासिल कर पायी है? सिंगूर और नंदीग्राम में लम्बी लड़ाई कैसे लड़ पाते अगर ये जनकमेटियां और स्वयंसेवक दस्ते गठित नहीं किये होते जो हमारा सुझाव

हैं। कम्युनिस्ट नीति-नैतिकता काफी ऊंचे दर्जे की होती है। आजादी आन्दोलन में मानवतावादी नैतिकता थी—देश का हित बड़ा व्यक्ति का हित गौण। 'मेरा देश, मेरी माता' 'सबके वास्ते मैं हरेक के वास्ते, मैं दूसरों के वास्ते'— यह सब आह्वान था। रूस और चीन पिछड़े हुए देश होने से वहाँ भी इन्ही बुर्जुआ मानवतावादी मूल्यबोधों ने क्रांति के समय काम किया था। वहाँ भी नैतिकता के तौर पर था—सर्वहारा क्रांति का हित मुख्य, व्यक्तिगत हित गौण। लेकिन कॉमरेड शिवदास घोष ने कहा था कि विकसित पूँजीवादी देशों में, भारत जैसे सापेक्षत: विकसित पूँजीवादी देश में भी क्रांति के समय, यहाँ तक कि समाजवाद विकसित हो जाने के बाद रूस और चीन में भी इस नैतिकता से काम नहीं चलेगा। इन सब देशों में उन्नत कम्युनिस्ट चरित्र हासिल करना है तो व्यक्तिगत स्वार्थ गौण रहने से काम नहीं चलेगा। व्यक्ति को केवल व्यक्तिगत सम्पत्ति से ही नहीं, बल्कि व्यक्तिवादी मानसिकता से भी मुक्त होना होगा। पति-पत्नी संबंध, पिता-माता-संतान के रिश्ते, स्नेह-प्रेम-प्यार से लेकर जीवन के सभी पहलुओं में व्यक्तिवाद से मुक्त होना होगा। क्रांति की जरूरत से, क्रांतिकारी पार्टी की जरूरत से, मजदूर वर्ग की मुक्ति की जरूरत से व्यक्तिगत सम्पत्ति, व्यक्तिसत्ता, व्यक्तिगत स्वार्थ सब कुछ हँसते-हँसते छोड़ देने की योग्यता हासिल करने को ही कम्युनिस्ट चरित्र हासिल करने का संघर्ष मानना होगा। कम्युनिष्ट चरित्र के युगोपयोगी यह उन्नत नैतिकता ही कॉमरेड शिवदास घोष ने पेश की है। इन सब के आसपास भी सीपीएम नहीं है। इन सब चीजों की चर्चा ही उन्होंने कभी नहीं की। सारी पार्टी महज धनबल और बाहूबल पर खड़ी है। यह धनबल और बाहूबल भी अब पार्टी का साथ छोड़ता जा रहा है क्योंकि सरकार बदल गई है। सीपीएम के लिए यही 'कम्युनिस्ट नैतिकता' है कि पार्टी को अंधे की तरह मानो। तर्क नहीं, सवाल नहीं, विरोध नहीं, पार्टी को मानना होगा। उनकी शक्ति का स्रोत मार्क्सवादी आदर्श पर चलना नहीं है, नीति-नैतिकता अपनाना नहीं है, शक्ति का स्रोत है शारीरिक बल, रोबदाब, प्रतिपक्ष के खिलाफ झूठा दुष्प्रचार और निन्दा अभियान चलाना और धनबल, पुलिस बल। कम्युनिस्ट नैतिकता तो दूर की बात रही, अतीत में विद्यासागर, रवीन्द्रनाथ, शरतचंद्र, सुभाषचंद्र, नजरुल और आजादीआन्दोलन के क्रांतिकारियों के प्रभाव से समाज में जो मानवतावादी संस्कृति का खुमार था, उस पर पहले पहल कांग्रेस ने प्रहार किया, उसके बाद जो कुछ बचा था, वह भी सीपीएम ने मटियामेट कर दिया है। इस विचार से अन्य बुर्जुआ पार्टियों से सीपीएम का क्या कोई फर्क है? आज सीपीएम नेता गलतियों को लेकर चर्चा कर रहे हैं। लेनिन ने कहा था कि कम्युनिस्टों के लिए गलती स्वीकार कर कह रहे हैं कि 'आपको तृणमूल के साथ जाने का अच्छा सबक मिल गया है, अब तक जिन दो सीटों पर जीतते आये उनमें से एक सीट हार गये, हमारे साथ आते तो और भी सीट बढ़ती'। सीपीएम के साथ जाने से सीट बढ़ती कि नहीं यह एक अलग बात है, लेकिन हम उनके साथ नहीं गये। क्योंकि किसके साथ जाने से कितनी सीट बढ़ेंगी, यह राजनीति हम कभी नहीं करते। हमने जब भी एकता की है, वह एकमात्र मजदूर वर्ग के संघर्ष और जनवादी जन आन्दोलन के हित में ही की है। इसीलिए 2001 में सीपीएम ने हमें उनके राज्य मुख्यालय पर आमंत्रित किया था, हम राजी हो जाते तो निश्चय ही हम काफी कुछ सीटें और मन्त्रीत्व पा जाते। लेकिन उनके प्रस्ताव को ठुकराते हुए हमने साफ कह दिया था कि 'आप वामपंथ को तज कर कांग्रेस, बीजेपी की तरह ही देशी-विदेशी पूँजी के स्वार्थ में वर्ग-संघर्ष और जन आन्दोलन को कुचल रहे हैं।' महज एक साल पहले ही भूतपूर्व मुख्यमंत्री ज्योति बसु की स्मृति सभा के मंच से उन्होंने हमसे अलग से गुपचुप बातचीत करने का अनुरोध किया था, हमने प्रत्युत्तर नहीं दिया। 1977 से ही पश्चिम बंगाल में हम सीपीएम सरकार की विभिन्न जनविरोध ी नीतियों के खिलाफ अकेले लड़ाई लड़ते आये हैं। आज के इस सभा स्थल रानी रासमणि अवेन्यू पर 1990 के मंहगाई—बस भाड़ा बढ़ोतरी—विरोधी आन्दोलन में पुलिस की गोली से शहीद हुए हमारी पार्टी के किशोर कार्यकर्ता मधाई हालदार की शहीद वेदी है। इस तरह के अनगिनत आन्दोलन हमने किये हैं। तब केन्द्र की कांग्रेस और राज्य की सीपीएम सरकार में अंदरखाने सांठगांठ थी। हमने 19 साल तक अकेले लड़ाई लड़कर प्राथमिक स्तर से अंग्रेजी वापस लागू करवाई। मीडिया तो हमारी कोई भी खबर देना नहीं चाहता है। देखेंगे कि आज की इस विशाल जनसभा की भी शायद ही कोई खबर कल मीडिया में आये क्योंकि हमारी पार्टी शासक पूँजीपतियों के लिए खतरनाक है। प्राथमिक स्तर से अंग्रेजी वापस लागू करवाने का आन्दोलन हमारी पार्टी ने किया है—यह बात मीडिया बताना नहीं चाहता है, लेकिन पश्चिम बंगाल में सभी को मालूम है। वे कहते हैं कि बुद्धिजीवियों ने यह आन्दोलन किया है। हाँ, यह बात सच है कि बुद्धिजीवियों ने अगुवाई की है लेकिन इन बुद्धिजीवियों को किसने लामबंद किया था? उनको किसने संगठित किया था? इसमें हमारी पार्टी की पहलकदमी की थी। मीडिया क्या यह नहीं जानता? वह सब जानता है लेकिन बताता नहीं है, बतायेगा नहीं। हम मजदूरों, किसानों, छात्र-नौजवानों की विभिन्न माँगों पर, बस भाड़ा और बिजली दर कम करवाने के पक्ष में, महिलाओं के उत्पीड़न के खिलाफ आन्दोलन किया है। इस तरह के कई आन्दोलन किये हैं, कुछ माँगें भी मनवायी हैं। तब ने आज तक क्या कहीं किया है? क्या अब तक इस तरह के आन्दोलन से कोई माँग वह हासिल कर पायी है? सिंगूर और नंदीग्राम में लम्बी लड़ाई कैसे लड़ पाते अगर ये जनकमेटियां और स्वयंसेवक दस्ते गठित नहीं किये होते जो हमारा सुझाव और पहलकदमी था। यहाँ तक कि यह बात भी हमने उस दिन खुलेआम यह कह दी थी कि सिंगूर में टाटा जमीन पर कब्जा नहीं कर पाता क्योंकि हमने तो लामबंद कर लोगों को संघर्ष के मैदान में उतार दिया था और प्रतिरोध खड़ा कर दिया था। दरअसल जमीन बचाने के लिए नर-नारियां मैदाने जंग में उतर कर तीन दिन से पुलिस की मार खाते हुए लड़ रहे थे। लेकिन तृणमूल यह कार्यक्रम नहीं चाहती थी। बल्कि उसने इसका विरोध किया। इसके बाद कलकत्ता में तृणमूल नेत्री ने अनशन शुरू किया। हाँ यह बात सही है कि स्वास्थ्य का जोखिम उठाकर तृणमूल नेत्री ने अनशन किया। लेकिन कलकत्ता में अनशन के चलते सिंगूर में जमीन पर जो प्रतिरोध संग्राम था, वहकमजोर पड़ गया और ठण्डा पड़ गया। इस मौके का फायदा उठाकर सरकार ने जमीन हड़प ली। वरना जमीन पर कब्जा कर लेना सरकार के वश की बात नहीं थी। जो हम नंदीग्राम में कर पाये, वह सिंगूर में नहीं किया जा सका। इसमें रहा है दोनों पार्टियों के दृष्टिकोण में साफ फर्क। हालाँकि, तृणमूल की ताकत का असर, तृणमूल साथ रहने से अखबारों, मीडिया के प्रचार ने इन आन्दोलनों के पक्ष में काम किया। हमारे अकेले-अकेले करने पर अखबार एक लाइन भी नहीं लिखते क्योंकि कांग्रेस, बीजेपी, सीपीएम की तरह तृणमूल अखबारों के लिए स्वीकार्य पार्टी है। हम हैं मीडिया के लिए अछूत। क्योंकि हम आन्दोलन करते हैं, पूंजीपतियों की 'शांति भंग' करते हैं, शासकों के लिए 'काफी परेशानियां' पैदा करते हैं। यह है उनकी समस्या। ये समझने में हमें भी कोई दिक्कत नहीं है। इतने दिन इस पब्लिसिटी के बिना ही हम आगे बढ़ते आये हैं, इसके बिना ही हम आगे बढ़ते जाएंगे। हमारी प्रगति कोई नहीं रोक पायेगा।

इसलिए सिंगूर-नंदीग्राम आन्दोलन में लगातार संगठित आन्दोलन खड़ा करने की हमारी योजना व नीति के साथ ही तृणमूल के जनबल व मीडियाबल, दोनों ही काम आये। हमारे बिना न तो वे कुछ नहीं कर पाते और न ही हम उनके बिना मांगें पूरी करवा पाते। लेकिन जहां उन्होंने विक्षोभ-आन्दोलन को वोटों की जमीन तैयार करने के लिए इस्तेमाल किया है, वहीं हमने क्रांतिकारी लक्ष्य को लेकर लगातार संगठित जनवादी आन्दोलन चलाते हुए माँगें पूरी करवाने के लिए किया है। यह बात मैं पहले भी खुल्लम खुल्ला कह चुका हूँ। यह भी सर्वविदित है कि सिंगूर-नंदीग्राम के ऐतिहासिक किसान आन्दोलन ने हरेक राज्य में जबरन भूमि अधिग्रहण का प्रतिरोध करने में

(शेष पृष्ठ 6 पर)

कॉ. प्रभाष घोष का भाषण...

(पृष्ठ 5 का शेष)

किसान-खेतमजदूरों को प्रेरित करते हुए भारत में जनआन्दोलन का एक नया अध्याय शुरू किया है। यहां हमारी पार्टी के द्वारा अदा की गई ऐतिहासि भूमिका गौरतलब है।

तृणमूल के साथ राज्य स्तर पर पार्टीगत एकता की बात हमने नंदीग्राम और सिंगूर आन्दोलन पर सीपीएम का वीभत्स हमला देखने के बाद में ही सोची। पुलिसिया बर्बरता हमने पहले भी झेली है, लाठी-गोली खाई हैं, सीपीएम के गुण्डों ने कई बार हमारे बहुत सारे कार्यकर्ताओं पर कातिलाना हमले किये हैं है। लेकिन नंदीग्राम में दो बार पुलिस की मदद से फासीवादी हमले किये गये, गोलियाँ चलवाई गई, महिलाओं से सामूहिक बलात्कार किये गये, खासकर दूसरी बार न केवल पुलिस, बल्कि पुलिस की वर्दी पहना कर क्रिमिनलों को पश्चिम बंगाल की विभिन्न जगहों से जुटाकर घेराबंदी करके बाहरी दुनिया से सम्पर्क काट कर नरसंहार और सामूहिक बलात्कार कराये गये। भारत में ऐसा कांग्रेस व बीजेपी ने भी नहीं किया। कांग्रेस-बीजेपी पुलिस से गोली चलवाती है, साम्प्रदायिक दंगों के दौरान महिलाओं से बलात्कार भी होते हैं, जैसे गुजरात हत्याकाण्ड में भी हुए। जनआन्दोलन का दमन करने के लिए क्रिमिनलों के द्वारा महिलाओं से बलात्कार करवाना कितना बड़ा अपराध है। सीपीएम ने एक क्रिमिनल वाहिनी भी बना डालीं। जहाँ भी आन्दोलन होता, वहीं पुलिस के साथ यह क्रिमिनल वाहिनी चली जाती। सिंगूर आन्दोलन के समर्थन में एक किशोरी तापसी मलिक मीटिंग-जुलूसों में शामिल हुआ करती थी, उसका खेतों से अपहरण कर बलात्कार करके जलाकर मार डाला। ऐसी है सीपीएम पार्टी। यही लोग फिर नैतिकता की बात करते हैं! इसी वजह से तब हमने देखा कि फासिस्टों के हमलों से कई जगह उभर कर आ रहे आन्दोलन की हम अकेले रक्षा नहीं कर पायेंगे। हम आरएसपी, फॉरवर्ड ब्लॉक और नक्सलों के पास गये। आरएसपी-फॉरवर्ड ब्लॉक के नेताओं ने कहा: 'आपकी दलील बिल्कुल सही है, लेकिन हम कुछ नहीं कर पायेंगे क्योंकि हम मंत्रिमंडल से बँधे हुए हैं।' नक्सल भी राजी नहीं हुए। इसके बाद ही तृणमूल के साथ हमारी बैठक हुई। गठबंधन करने के लिए हमने उनके सामने तीन शर्तें रखी। तृणमूल उस समय कांग्रेस के साथ भी नहीं थी, बीजेपी के साथ भी नहीं थी। वे लोग राजी हो गये। क्योंकि वे जानते हैं कि नहीं थी। इससे पहले कांग्रेस कहा करती थी कि तृणमूल है बीजेपी की बी-टीम, तृणमूल कहा करती थी कि कांग्रेस है सीपीएम की बी-टीम। यह सर्वविदित है। जयनगर सीट पर तृणमूल सचमुच ही सिनसियरली काम किया। वर्ना यह सच है कि हम अकेले नहीं जीत पाते। बाकी सब सीटों पर हमारे कार्यकर्ताओं ने भी लोकसभा और विधान सभा चुनावों में उनके उम्मीदवारों के लिए कितना जी जान से परिश्रम किया है, जनता ने यह साफ देखा है और तृणमूल के नेता-कार्यकर्ता भी यह बात बखूबी जानते हैं। लेकिन लोकसभा के चुनाव परिणाम आने के बाद देखा गया कि सीपीएम की सीटें काफी घट गई हैं। तृणमूल को साथ मिलाये बिना कांग्रेस सरकार नहीं बना सकती थी। इसलिए कांग्रेस के लिए तृणमूल महत्वपूर्ण हो गई। औद्योगिक घरानों के साथ तृणमूल की साठगांठ बढ़ गई। औद्योगिक घराने बहुत लम्बे अर्से से चाह रहे थे कि एसयूसीआई(सी) से तृणमूल रिश्ता तोड़ ले। क्योंकि वे सीपीएम सहित सभी को खरीद सकते हैं लेकिन एसयूसीआई(सी) को नहीं। एसयूसीआई (सी) थी इसीलिए तो सिंगूर-नंदीग्राम के आन्दोलन ने ऐसा रूप लिया, जीत हासिल की, जिसका असर सारे देश भर में फैल गया। इसलिए कांग्रेस, औद्योगिक घराने, मीडिया व बीजेपी तो चाह रही थी, सीपीएम भी चाह रही थी, सभी चाह रहे थे कि तृणमूल-एसयूसीआई(सी) की एकता टूट जाये। क्योंकि हमारी पार्टी क्रांतिकारी पार्टी है, इसलिए यह उनके लिए आफत पैदा कर देती है। हम मजदूर-किसानों को जागरूक कर देते हैं, हम आन्दोलन करते हैं और हमें एमएलए, एमपी की संख्या बढ़ा देने का प्रलोभन देकर, मंत्री पद देकर खरीदा नहीं जा सकता है।

लोकसभा चुनावों के बाद तृणमूल हमसे काफी बचकर चल रही थी, फिर आने वाले विधानसभा चुनावों की गर्ज से नाता पूरी तरह तोड़ना भी नहीं चाह रही थी। उस समय ऐसी स्थिति चल रही थी। हमें इस फैसले पर पहुँचना पड़ा कि सीपीएम ने पश्चिम बंगाल में 34 साल के शासनकाल में जो दमघोंटू हालात पैदा कर दिये हैं, फासीवादी हमलों से जनआन्दोलन को कुचलती जा रही थी, ऐसे में सीपीएम को हराना और सरकार से हटाना जनआन्दोलन की माँग के रूप में आ गया था। आम लोगों के अलावा कई वामपंथी ख्यालात वाले लोगों की भी यही चाह थी। जनआन्दोलन की इस माँग की कद्र करते हुए ही हमने चुनावों में सीपीएम की हार पक्की करनी चाही ताकि पश्चिम बंगाल में लोगों को इस दमघोंटू हालात से कुछ राहत मिल सके, वे जनतांत्रिक विरोध जताने के लिए मुँह खोल सकें। हम जानते हैं कि सीपीएम जितनी ब्युरोक्रेटिकली पंच-सरपंच बनने, एमएलए, एमपी बनने के लोभ में पार्टी में आये हैं? इस पार्टी से लगाव बिल्कुल अलग तरह का ही है। यह लगााव मार्क्सवाद-लेनिनवाद-शिवदास घोष चिन्तनधारा और उन्नततर सर्वहारा संस्कृति के आधार पर है। लेनिन-स्टालिन ने रूस में, माओ त्से-तुंग ने चीन में, होची मिन ने वियतनाम में एमएलए, एमपी के बल पर क्रांति नहीं की थी। क्रांतिकारी विचारधारा, क्रांतिकारी चरित्र और क्रांतिकारी आदर्श पर संगठित जनशक्ति के बल पर क्रांति की थी। इसलिए हमारा नामोनिशान मिटाने का दम किसी में नहीं है।

सरकार बदलने का अर्थ व्यवस्था बदलना नहीं है।

पिछले साल 24 अप्रैल को मैदान में हुई सभा से तृणमूल को हमने साफ कहा था कि आप सरकार में होंगे और हम विपक्ष में, सड़कों पर गैर संसदीय आन्दोलन करेंगे। हमने यह भी कह दिया था कि सरकार बदल जाने का मायने शोषणमूलक व्यवस्था और राज्य व्यवस्था बदल जाना नहीं है। लिहाजा शोषण-अत्याचार कम नहीं होगा, इसलिए जनआन्दोलन भी होगा, चुनाव के बाद हम विपक्ष में बैठेंगे। जब तृणमूल से यह बात कही तब भी हमारे साथ उनकी कुल मिलाकर ढीलीढाली एकता थी। हमें चाहने वाले कुछ लोग जो हमसे स्नेह करते हैं, उन्होंने कहा कि आप इतना सीधम सीधे क्यों कहते हैं? उनके अनुसार बेहतर यह होता कि हम कांग्रेस का जोरदार विरोध शायद नहीं करना चाहिए था और सरकार में नहीं जाएंगे, विपक्ष में बैठेंगे - यह घोषणा चुनावों के बाद कर सकते थे। उन्हें लगा कि ऐसा करने से अप्रिय घटना नहीं घटती और हमें और भी ज्यादा सीटें मिलती। उनसे पूरी विनम्रता से हमने कहा कि हम क्रांतिकारी होने के नाते ऐसी चालाकी व छलबाजी नहीं करते। हम अपनी नीति-विचारधारा खुल्लम खुल्ला रखते हैं। क्योंकि सच खोजने के काम में झूठ के कोई स्थान नहीं होता है। हम जनता को हमेशा अपने वक्तव्य से खुलेआम वकिफ करवाते हैं। यही मार्क्सवाद की सीख है। टैकटिक्स के नाम पर हम कोई तिकड़मबाजी नहीं करते। इतिहास बतायेगा हम सही थे या गलत। हमारे महान शिक्षक कह गये हैं कि क्रांतिकारी लाइन के आधार पर आन्दोलन करें, चुनावों में भी क्रांतिकारी उद्देश्यपरकता से ही भाग लें। क्रांतिकारी लाइन के आधार पर अगर वोट मिलें, तो बहुत अच्छा, सीट मिले, तो लें, अगर एक भी सीट नहीं मिली, तो भी क्रांतिकारी लाइन न छोड़ें। यह पार्टी गरीबों की है, यह सर्वहाराओं की पार्टी है, यह पार्टी क्रांतिकारी पार्टी है। जो चालाक हैं वे समझते हैं कि वे जीत गये हैं और हम ठगे गए हैं। चलो यह इतिहास को तय करने दें। आज पश्चिम

पायेंगे क्योंकि हम मंत्रिमंडल से बंधे हुए हैं।' नक्सल भी राजी नहीं हुए। इसके बाद ही तृणमूल के साथ हमारी बैठक हुई। गठबंधन करने के लिए हमने उनके सामने तीन शर्तें रखी। तृणमूल उस समय कांग्रेस के साथ भी नहीं थी, बीजेपी के साथ भी नहीं थी। वे लोग राजी हो गये। क्योंकि वे जानते हैं कि हमारी पार्टी राज्य में अपना वजन रखती है, आप पर लोग जबरदस्त विश्वास और भरोसा रखते हैं और वे वोटों में उसका फायदा उठा सकते हैं। कलकत्ता हाई कोर्ट के एक अग्रणी प्रतिष्ठित एकवोकेट, जिन्होंने अपेन घर पर यह बैठक आयोजित करवाई थी, वे मुझ से बार-बार तृणमूल के साथ चुनावों में भी एकता करने का सुझाव दे रहे थे। मैंने कहा कि हम चुनाव में क्या करेंगे? हमें तो चुनावों में विधानसभा क्षेत्रवार औसतन तीन हजार, चार हजार, पाँच हजार वोट मिलते हैं। उन्होंने कहा, ''प्रभाष दा, आपको चुनाव मे अकेले खड़े होने से इतनी ही वोट मिलेंगी। जैसे मैं चाहता हूँ कि आप जीतें लेकिन मैं भी आपको वोट नहीं देता हूँ। चंदा देता हूँ। क्योंकि हम जिस पार्टी को सत्ता से हटाना चाहते हैं, आप उसे हरा नहीं पायेंगे। आप पैसा पानी की तरह नहीं बहायेंगे, गाली-गलौज, दुष्प्रचार नहीं करेंगे, आपको मीडिया से प्रचार-पब्लिसिटी नहीं मिलेगी, इस तरह क्या आजकल चुनाव जीता जा सकता है? लेकिन अगर किसी दूसरी पार्टी को आपका साथ मिल जाये, तो आपके होने से ही उनके 15-20 हजार वोट बढ़ जायेंगे। क्योंकि आपको नहीं पता कि आप पर लोग कितना विश्वास और भरोसा करते हैं।''

एमएलए एमपी या मंत्रीत्व देकर एसयूसीआई(सी) को खरीदा नहीं जा सकता

इसलिए तृणमूल को जो कहा, वह उसने मान लिया। केन्द्र की कांग्रेस के खिलाफ लड़ना होगा, कांग्रेस और बीजेपी से समान दूरी बनाये रखनी होगा, कांग्रेस और बीजेपी से समान दूरी बनाये रखनी होगी, मार्क्सवाद-लेनिनवाद पर कोई हमला नहीं किया जाएगा—इन सभी बातों पर वह राजी हो गई। हम जानते थे कि यह प्रतिबद्धता ज्यादा दिन नहीं रहेगी। फिर भी जबतक जितनी भी संभव हो प्रतिबद्धता बरकरार रखी जाये। इसके बाद लोकसभा चुनाव आये। अखबारों ने हवा बनायी, औद्योगिक घरानों ने दबाव डाला कि कांग्रेस के साथ हो जाये तृणमूल। हमने एतराज किया। उसके बाद तय हुआ कि हम कांग्रेस के खिलाफ उम्मीदवार देंगे। तृणमूल राजी हो गई और जयनगर लोकसभा सीट हमारे लिए छोड़ दी गई। मै आपको बता दूँ कि संसदीय चुनावों में हमें 2-3 सीट देने को कहा था। तृणमूल नेत्री ने खुद मुझसे कहा था कि विधानसभा चुनावों के समय आपको कुछ ज्यादा सीट देंगी पर अभी मुमकिन नहीं है। हाँ, लोकसभा चुनावों में जयनगर में हमारी उन्होंने मदद की, तब भी कांग्रेस के साथ उनका गठबंधन, उनकी एकता घनिष्ठ

करते हुए ही हमने चुनावों में सीपीएम की हार पक्की करनी चाही ताकि पश्चिम बंगाल में लोगों को इस दमघेंटू हालात से कुछ राहत मिल सके, वे जनतांत्रिक विरोध जताने के लिए मुँह खोल सकें। हम जानते हैं कि सीपीएम जितनी ब्युरोक्रेटिकली सेन्टरलाइज्ड पार्टी के तौर पर एकदम पुलिस-प्रशासन से लेकर सब पर नियंत्रण कायम कर रखा था, तृणमूल सरकार में बैठकर चाह कर भी उतना नियंत्रण कायम नहीं कर पायेगी। इसी वजह से हमने सरकार को बदल देना चाहा। सीपीएम को चुनाव में हराने के लिए तृणमूल का हमने समर्थन यह बात जानते हुए ही किया कि तृणमूल भी कांग्रेस या सीपीएम की तरह बुर्जुआ वर्ग स्वार्थ में ही काम करेगी। यह भी आपको मालूम होना चाहिए कि तृणमूल ने विधानसभा चुनावों से पहले सीट समझौते को लेकर वार्ता के लिए तीन बार हमारे साथ बैठकें की थी, पर उन्होंने ऐसा कोई आभास नहीं दिया कि हमारे लिए जयनगर, कुलतली के अलावा और कोई सीट नहीं छोड़ेगी। लोकसभा चुनावों के समय तो कुछ ज्यादा सीटें देने का आश्वासन भी दिया था। बातचीत जारी थी कि जनता की तरह हमें भी अचानक मीडिया से पता चला कि हमें दो सीटों के अलावा और कोई सीट नहीं दी जाएगी। अचानक ऐसा कैसे हुआ? इतला देने का साधारण शिष्टाचार तक वे बरकरार नहीं रख पाये। वे जानते हैं, पब्लिक भी बखूबी जानती है कि उनके नेता-कार्यकर्ताओं के साथ हमारे नेता-कार्यकर्ताओं ने क्या आचरण किया है। कभी किसी बात से हम मूकरे नहीं, उनसे कोई भी चालाकी, झांसेबाजी हमने नहीं की। यह हमारी पार्टी का कल्चर ही नहीं है। तब फिर उनके नेतृत्व ने ऐसा क्यों किया? इसकी एक ही व्याख्या हो सकती है। आखरी पल में तृणमूल पर औद्योगिक घरानों, बड़े व्यापारियों व बुर्जुआ मीडिया का जबरदस्त दबाव आया कि एसयूसीआई(सी) के लिए दो से ज्यादा सीट मत छोड़ो। इन दोनों जगह भी ऐसी चाल चलो कि इन पर यह जीत न पाये। कुलतली में उनकी साजिश सफल हो गई। क्योंकि हमारे कार्यकर्ता सजग नहीं थे। जबकि जयनगर में सजग रहने से उनकी साजिश सफल नहीं हुई। अब पब्लिक और तृणमूल के कार्यकर्ताओं ने भी समझ लिया है कि जहाँ अब तक सीपीएम, कांग्रेस और बाद में तृणमूल के खिलाफ अकेले खड़े होकर भी बार-बार कुलतली में हमारी पार्टी जीती हैं, वहाँ इस बार क्यों हार गई।

लेकिन अगर हमारी ये दोनों सीटें भी नहीं रहती, जयनगर में भी हम हार जाते, लोकसभा में भी हमारा एमपी नहीं बनता, तो भी क्या हमारा अस्तित्व खत्म हो जाता? आज कितनी विशाल संख्या में लोग इस सभा में आये हैं जबकि बहुत सारे लोग खेतों में खेतीबाड़ी और रमजान के त्यौहार पर रोजे होने के कारण नहीं आ पाये हैं। ये क्या मंत्री पद पाने के लालच में, पंचायत में

भी सीट नहीं मिली, तो भी क्रांतिकारी लाइन न छोड़ें। यह पार्टी गरीबों की है, यह सर्वहाराओं की पार्टी है, यह पार्टी क्रांतिकारी पार्टी है। जो चालाक हैं वे समझते हैं कि वे जीत गये हैं और हम ठगे गए हैं। चलो यह इतिहास को तय करने दें। आज पश्चिम बंगाल के घर-घर में लोग बड़े भारी मन से पूछ रहे है कि क्यों एसयूसीआई (सी) को और सीटें नहीं दी, क्यों कुलतली में इसे हरा दिया? हमारे लिए यह हमदर्दी यह अनुराग और यह स्नेह बेशकीमती है—यह मार्क्सवाद-लेनिनवाद-शिवदास घोष चिन्तनधारा के आधार पर हुए लम्बे संघर्ष का फल है, बहुत सारे शहीदों की आत्मआहूति का फल है। इससे साफ जाहिर है कि जहां सीपीआई(एम) ने सत्ता से देशी-विदेशी पूंजी के स्वार्थ में जनता पर हमला किया है, वहीं हमने जनआन्दोलन और वर्ग-संघर्ष के हित में ही तृणमूल के साथ एकता की है। कितनी सीटें हमें ज्यादा मिली, कितनी सीटें हमने गवाँ दी—यह हमारा प्राथमिक सरोकार नहीं था। चुनावों से पहले ही यह बात हमने खुलआम जाहिर कर दी थी कि चुनावों के बाद हम सरकार में नहीं बैठेंगे, हम विपक्ष में रहेंगे।

आज तृणमूल सत्ता में है। हम विपक्ष में हैं। यह बात हमने पहले भी कही है कि सरकार बदलने का मायने राज बदलना नहीं होता है, व्यवस्था बदलना नहीं होता है। मालिक मालिक और मजदूर मजदूर ही रहेगा, शोषण-लूट जारी रहेगी। इस व्यवस्था में सरकार शासक वर्ग की महज पोलिटिकल मेनेजर के सिवा और कुछ नहीं होती है। औद्योगिक घराने जैसे कम्पनी चलाने के लिए मैनेजर, बिजनेस मैनेजर रखते हैं, वैसे ही यह सरकार शासक वर्ग की पोलिटिकल मैनेजर की तरह काम करती है। हम अगर सरकार में अकेले जाते, तो हम क्या करते? लेनिन ने जैसा कहा था कि चुनावों में भाग लेने कम्युनिस्टों का मकसद रहेगा जनता को बुर्जुआ संसद की यह व्यर्थता दिखाना, यह साफ तौर पर दिखाना कि बुर्जुआ संसद, असेम्बली और वोट के द्वारा वांछित मुक्ति नहीं मिल सकती और इस प्रकार उनको संसदीय भ्रम से मुक्त करना। निश्चय ही यह उन्होने यह मानकर कहा था कि कम्युनिस्ट संसद में अल्पमत रहेंगे। लेकिन वे उस स्थिति का पूर्वानुमान नहीं लगा सके जिसमें कम्युनिस्ट या तो अके या अन्यों के साथ गठबंधन करके सरकार बनाने का मौका पा जायें। अत: वे इस बारे में कोई गाइड लाइन भी नहीं दे पाये। मार्क्सवाद-लेनिनवाद को विकसित व समृद्ध करने की प्रक्रिया में कॉमरेड शिवदास घोष ने इसका जवाब मुहैया कराया। उन्होंने कहा कि अगर कम्युनिस्टों को ऐसा मौका मिल जाए तो वे इस तरह सरकार चलायें कि यह वर्ग संघर्ष व जनआन्दोलनों को विकसित करने का और बन जाए। यह था जो उन्होंने कहा

(शेष पृष्ठ 7 पर)

कॉ. प्रभाष घोष का भाषण...

(पृष्ठ 1 का शेष)

और उनके मार्गदर्शन में हमारी पार्टी ने 1967 में पहली संयुक्त मोर्चा सरकार के कार्यकाल में जिस पर अमल किया। हम मजदूर-किसानों व दूसरे तबकों के मेहनतकशों के आन्दोलनो को बढ़ावा दिया होता और उन जायज आन्दोलनों में पुलिस हस्तक्षेप नहीं होने देते और उन्हें कुचलने नहीं देते। अफसरशाही और पुलिस-प्रशासन जो जनता पर अत्याचार करने के दमनात्मक यंत्र के सिवाय और कुछ नहीं है, हम उसकी शक्तियों को संकुचित कर देते। उधर हम जनआन्दोलनों की शक्ति, जनता की संघर्ष करने की शक्ति और मजदूर-किसानों की एकताबद्ध शक्ति बढ़ाने का प्रयास करते। यह करते, तो केन्द्र से लड़ाई हो जाती। केन्द्र सरकार हो सकता है कि राज्य सरकार को गिरा देती। तब हम देश के लोग दिखा देते कि एक सरकार जो जनहित, लोकतंत्र और जनवादी आन्दोलन के हित में काम कर रही है, वह बुर्जुआ राजसत्ता द्वारा चलने नहीं दी और फिर केन्द्र सरकार की इस मनमानी के खिलाफ जोरदार आन्दोलन गठित करते। कॉमरेड शिवदास घोष द्वारा दिखाया गया यह दृष्टिकोण न तो सीपीएम और न ही सीपीआई ने माना क्योंकि इसमें निहित खतरे—लम्बे अर्से तक सरकारी गद्दी का सुख नहीं भोग पाने के खतरे को उन्होंने भांप लिया था।

अब तो तृणमूल की सरकार है, सरकार से वे क्या कर रहे हैं? सिंगूर की जमीन के उद्धार की ही बात ले लीजिए। इसके चाहिए तो ये था कि सारे हुगली जिले के किसानों और गरीब लोगों को लामबंद करके यह बाड़ तोड़ कर टाटा की जमीन पर कब्जा कर लेना। पूर्ववर्ती सीपीएम सरकार ने ब्रिटिश शासनकाल के एक औपनिवेशिक काल के कानून के तहत यह उपजाऊ कृषि भूमि हड़पी थी, जिस कानून को बदलने या खरिज करने के लिए अब संसद में बहस किसान आन्दोलन के दबाव में करनी पड़ रही है। जनआन्दोलन की लहर खड़ी करके यह जमीन वापस लेने का रास्ता तृणमूल ने क्यों नहीं लिया? पुलिस-प्रशासन तो उनके ही हाथों में है और यह आन्दोलन तो हर लिहाज से न्यायसंगत होता। एक सरकार ने टाटा जैसे एकाधिकारी घराने के स्वार्थ में किसानों की जमीन उनकी इच्छा के विरुद्ध जबरन छीन ली है, उसी जमीन का पुनरुद्धार करना क्या अपराध है? हालाँकि बुर्जुआ 'कानून-व्यवस्था' की दृष्टि से यह अपराध है। इसलिए तृणमूल सरकार ऐसा कर नहीं

नई दार्जिलिंग सन्धि ने आग थोड़ी दबा दी है

गोरखालैण्ड समस्या को लेकर जो सन्धि की गई है, उससे असल में आग बस थोड़ी दबा दी गयी है। यह काम सीपीएम ने भी किया था। गोरखों का आरोप है कि बंगाली और मारवाड़ी व्यापारी दार्जिलिंग को लम्बे अर्से से कन्ट्रोल कर रहे हैं, वे गोरखों को मर्यादा नहीं देते। आज उनमें जो तबका पढ़ा-लिखा हो गया है, वह बंगालियों के 'अधिपत्य' के विरुद्ध नारा उठा रहा है। अलग राज्य बनाना चाह रहे हैं। इस माँग पर आम नेपालियों को भड़का कर यह समझा रहे हैं कि उससे उनका आर्थिक विकास होगा। सब समस्याओं का समाधान हो जाएगा। फिर दूसरी तरफ बंगालियों को डर है कि नेपाल से आये गोरखा यहाँ सम्पति खरीद रहे हैं, इनकी संख्या बढ़ती जा रही है। उनकी माँग मान लेने से उत्तर बंगाल का बहुत बड़ा इलाका 'गोरखालैण्ड में चला जायेगा।' बंगाली लोग अल्पसंख्यक हो जाने से आदिवासियों को डर है कि उन पर नेपालियों का आधिपत्य बढ़ जाएगा। बंगाली भी बंटे हुए हैं, कोई कामतापुरी, कोई ग्रेटर कूँच बिहार हो—ये सब माँगें उठा रहा है। यह जो फूटपरस्त-अलगाववादी मानसिकता व प्रवृत्ति है, इसे कौन पैदा कर रहा है? इसे भारत का पूंजीवाद पैदा कर रहा है। आजादी आन्दोलन में पूंजीवाद-विरोधी क्रांति के डर से थर-थर कांप रहे समझौतापरस्त पूंजीवादी नेतृत्व ने देश के विभिन्न भाषभाषी, अलग-अलग धर्मावलम्बी विभिन्न उपराष्टीयताओं को मिलजुल कर एक राष्ट्र नहीं बनने दिया। नतीजतन, हम राजनीतिक तौर पर एक राष्ट्र तो बन गये, पर अभी भी बंगाली-बिहारी, हिन्दू-मुस्लिम, अपर कास्ट—लोअर कास्ट, आदिवासी-गैरआदिवासी, बंगाली-नेपाली में ही बंटे रह गये। भाषा-धर्म-इलाका-जातपात आदि की फूटपरस्त मानसिकता बची रह ही गई है, जिसको पूंजीवाद दलाल उकसा कर लोगों को आपसी झगड़ों में फंसा देते हैं ताकि वे इकट्ठे होकर पूंजीवादी शासन के खिलाफ न लड़ सकें। इसमें वोट बैंक की पोलिटिक्स भी काम कर रही है। सभी पार्टियाँ इस या उस समुदाय का तुष्टिकरण करने में लगी हुई हैं। जनआन्दोलन की वांछित एकता इस तरह टूट रही है। अलग राज्य बनने से ही अगर समस्या हल हो जाती, तो फिर झारखण्ड, उत्तराखण्ड, छत्तीसगढ़, मिजोरम, नागालैण्ड आदि राज्यों में लोगों की कोई समस्या ही नहीं रहती। ये अन्य राज्यों की तरह ही दुर्दशाग्रस्त व दमन के शिकार हैं। बुनियादी समस्याएं दूर करनी हैं तो जनता को फूटपरस्त-अलगाववादी मानसिकता से ऊपर उठकर पूंजीवाद-विरोधी आन्दोलन में एकताबद्ध तौर पर शामिल होना होगा। इसलिए, जनवादी मूल्यों के आधार पर आन्दोलन में शराब के ठेकों के सामने धरने होते थे, शराबखोरी व नशाखोरी का बहिष्कार होता था और इसके लिए स्वयंसेवकों को पुलिस यातनाएं झेलनी पड़तीइ थी। लेकिन सीपीएम ने अपने शासनकाल में इस बहाने शराब के ठेके कई गुना बढ़ा दिये कि इनसे राजस्व वसूली में इजाफा होगा। अब यही दलील देकर तृणमूल सरकार भी शराब की दुकानें व कारखाने और ज्यादा खोलती जा रही है।

इसलिए देखा जा रहा है कि विभिन्न सवालों पर सीपीएम-तृणमूल के मत का मेल होता जा रहा है। जैसे केन्द्र में कांग्रेस और बीजेपी में है। तृणमूल अब सत्ता में है, कहा गया है कि सीपीएम जिम्मेदार विपक्ष की भूमिका अदा करेगी। एक शब्द आजकल प्रचलित हो गया है—जिम्मेदार विपक्षी दल, जिसमें जिम्मेदारी बोध है। और हम हैं गैर जिम्मेदार, क्योंकि हम उनके लिए झमेले करते हैं, प्रतिवाद, जलसे-जुलूस, बंद-हड़ताल यह सब करते हैं। अभी देखिये, तृणमूल हड़ताल-बंद के खिलाफ भी बोलने लगी है। कांग्रेस-बीजेपी को भी इसको लेकर जबरदस्त एतराज है। सीपीएम सरकार में जाने से पहले यह सब किया करती थी। सरकार में जाने के बाद बीच-बीच में सर्वभारतीय इमेज बनाये रखने के लिए 'सरकारी छुट्टी का दिन' के रूप में बंद किया करती थी। लेकिन राज्य में उनकी सरकार की जनविरोधी नीतियों के खिलाफ हमारे द्वारा हड़ताल-बंद का आह्वान किये जाने पर सीपीएम ने विरोध किया, गुण्डों व पुलिस से हमले करवाये। तृणमूल ने भी इस बार केन्द्र और राज्य में सत्ता में जाने से पहले बंद-हड़तालें का सहारा लिया है। अब इनका विरोध कर रही है। क्योंकि देशी-विदेशी पूंजीपति वर्ग बंद- हड़ताल के खिलाफ हैं। मीडिया ने हड़ताल या बंद होते ही जनता को गुमराह करने के लिए 'रोजगार नाशक' होने की बात चालूकर दी है। बुद्धिजीवियों का एक तबका भी गुमराह हो गया है। आजादी आन्दोलन के दौरान न जाने कितनी हड़तालें, व बायकाट हुआ करते थे। पचास-साठ के दशक में न जाने कितने बंद हुए व हड़तालें हुई। पाश्चात्य देशों को देखिये, इटली, यूनान, फ्रांस, इंग्लैण्ड व अन्य देशों में हड़तालों की बाढ़ आई हुई है, बंद पर बंद हो रहे हैं। वहाँ ऐसे पण्डित बुद्धिजीवी, पत्रकार नहीं हैं जो लिखते हों कि 'बंद रोजगार नाशक हैं।' हाँ , हड़ताल-बंद-रास्ता रोको से पूंजीपतियों व उच्च मध्यम वर्गीय तबके को असुविधा होती है जो गाड़ी के बिना नहीं चलता, जिन्हें डीनर खाने 5 सितारा होटल जाना पड़ता है। इन चंद अमीरों व सुविधाभोगियों को इस बात को लेकर कोई सिरदर्दी नहीं है कि पूंजीवादी शोषण-लूट लाखों लोगों का सर्वनाश कर रही है, जीवन तबाह कर रही है,

एकाधिकारी घराने के स्वार्थ में किसानों की जमीन उनकी इच्छा के विरुद्ध जबरन छीन ली है, उसी जमीन का पुनरुद्धार करना क्या अपराध है? हालाँकि बुर्जुआ 'कानून-व्यवस्था' की दृष्टि से यह अपराध है। इसलिए तृणमूल सरकार ऐसा कर नहीं सकती। लालगढ़ में जनआन्दोलन को तोड़ने के लिए 'माओवादियों' का हौआ खड़ा करके सीपीएम-कांग्रेस ने मिलकर संयुक्त अर्धसैनिक बल तैनात किये थे, कितने जुल्म-अत्याचार किये थे। इस संयुक्त बल को वहाँ से हटाने की माँग बार-बार जनता ने की है। अभी भी इसे वहाँ रखना होगा--यह बात तृणमूल-सीपीएम-कांग्रेस ने लालगढ़ थाने में बैठकर फैसला ले लिया। उस मीटिंग मे हमें नहीं बुलाया, क्योंकि वे जानते थे कि हम फैसले का विरोध करेंगे। लालगढ़ के थानेदार ने कह दिया कि एसयूसीआई(सी) का वहां अस्तित्व ही नहीं है। जबकि लालगढ़ के आन्दोलन में हमारे 21 कार्यकर्ताओं पर अभी भी मुकदमें चल रहे हैं, कुछ तो जेल में भी हैं। घोर वंचना के शिकार गरीब आदिवासियों पर जिस सीपीएम व उसकी सरकार के अत्याचारों के खिलाफ तमाम आन्दोलन हुआ, उसी के साथ तृणमूल ने इस सवाल पर सर्वसम्मति से फैसला लिया। पश्चिम बंगाल का नाम बदलने का प्रस्ताव सीपीएम सरकार 1999 में लायी थी। इस नाम परिवर्तन को लेकर तृणमूल सरकार तत्पर हो गई है। यह क्या अब बहुत जरूरी हो गया है? जबकि इससे प्रशासन पर काफी सारा पैसा खर्च होगा। हस्पतालों में प्राइवेट-पब्लिक पार्टनरशिप जो कि निजीकरण का ही दूसरा मंगलभाषी नाम है, सीपीएम सरकार द्वारा चालू की गई थी। उसके खिलाफ हमने संघर्ष किया। तृणमूल सरकार उस स्कीम को और बढ़ावा दे रही है। प्राइवेट कम्पनियों के हाथों में हस्पतालों के कई विभागों का मालिकाना सौंपा जा रहा है क्योंकि केन्द्र की कांग्रेस सरकार चाहती है। हस्पतालों को धीरे-धीरे व्यवसायियों के हाथों में सौंपने का बंदोबस्त जारी है। सीपीएम ने चौथी कक्षा तक परीक्षाएँ लेनी बंद कर दी थी। हमने विरोध किया था। लेकिन सीपीएम ने हमारी बात मानी नहीं। आज भी हमारी पार्टी की पहल पर गैर सरकारी तौर पर एक जन कमेटी के तहत लाखों छात्र चौथी कक्षा की फाइनेल छात्रवृत्ति परीक्षा दे रहे हैं। अब केन्द्रीय सरकार का फैसला है कि आठवीं कक्षा तक पास-फेल प्रथा नहीं रहेगी। नई राज्य सरकार के शिक्षामंत्री ने भी वही बात कही है। बाद में प्रबल प्रतिवाद के सामने कुछ पीछे हटते हुए उन्होंने कहा कि यह उनकी निजी राय है। लेकिन मामला इतना सरल नहीं है। आज हो या कल ऐसी नीति फिर लागू करने की वे जरूर कोशिश करेंगे। हम देख रहे हैं कि इस मामले में भी कांग्रेस-सीपीएम के साथ तृणमूल की दृष्टिकोणगत एकता हो गई है।

की तरह ही दुर्दशाग्रस्त व दमन के शिकार हैं। बुनियादी समस्याएं दूर करनी हैं तो जनता को फूटपरस्त-अलगाववादी मानसिकता से ऊपर उठकर पूंजीवाद-विरोधी आन्दोलन में एकताबद्ध तौर पर शामिल होना होगा। इसलिए, जनवादी मूल्यों के आधार पर पूंजीवाद के खिलाफ जनवादी आन्दोलन चाहिए। यह रास्ता न अपनाकर तृणमूल सरकार ने सीपीएम के दिखाये रास्ते पर ही जिस तरह त्रिपक्षीय संधि की और गोरखालैंड सीमा क्षेत्रीय प्रशासन गठित करने में सहायक हुई उससें आप देखेंगे कि देश के इस भाग में फिर आग भड़क उठेगी। पहले सुभाष घीसिंग ने काफी हंगामा किया। उसके बाद सीपीएम से समझौता हो जाते ही सत्ता-रुपया-पैसा मिल जाने पर आन्दोलन बंद कर चुप बैठ गया था। सुभाष घीसिंग के खिलाफ बाद में विमल गुरुंग उठ खड़ा हुआ। हो सकता है उसे फिर गोरखालैण्ड की मांग के लिए आग भड़कानी होगी, वरना उसके खिलाफ कोई और उठ खड़ा होगा। यह चलता ही रहेगा। इससे क्या समाधान हो जाएगा? विभिन्न मुद्दों पर सीपीएम-तृणमूल के मत का मेल होता जा रहा है।

इसके बाद विधानपरिषद गठन का मामला देखिये। यह इस राज्य में सभी संबंधित पक्षों की सर्वसम्मति से आधी सदी पहले भंग कर दी गई थी, ज्यादातर राज्यों में अब यह नहीं है। लेकिन यहाँ तृणमूल इसे फिर ला रही है। कुछ लोगों के लिए सुविधाजनक ओहदों पर बैठने का जुगाड़ बनाने के सिवाय इससे और क्या प्रयोजन सिद्ध होगा? इसके लिए करोड़ों रुपये फिजूल खर्चे होंगे। तृणमूल नेताओं के मुँह से कलकत्ता को लन्दन बनाने, उत्तरी बंगाल को स्वीट्जरलैण्ड बनाने का नारा देते सुनकर सीपीएम के राज्य सचिव ने कहा है कि लन्दन बनाने की जरूरत नहीं है, गाँवों में पानी चाहिए, वह देना चाहिए। अब सीपीएम नेतागण भी गाँवों के लोगों की बहुत सोच-फिक्र कर रहे हैं। 34 साल में लोगों ने देखा कि उन्होंने गाँवों को कितना पानी दे दिया लेकिन अब पानी चाहिए, कारखाना चाहिए, ये चाहिए, वो चाहिए ये सब मांग उन्हें करनी पड़ रही हैं। हम कहते हैं कि कलकत्ता को कलकत्ता ही रहने दें । कलकत्ता मे आर्सेनिक मुक्त पीने के पानी का प्रबन्ध करें, टूटी सड़कों की मरम्मत करें, गंदे पानी की निकासी का प्रबंध करें और जलभराव रोकें, कलकत्ता का ट्रैफिक कन्ट्रोल करें, कलकत्ता में शराब के ठेके, जुआघर बंद करें। कलकत्ता की सड़कों पर महिलाओं को पर्याप्त सुरक्षा दें ताकि उनके साथ छेड़खानी न हो। कलकत्ता में जब इतनी बहुमंजिला अर्पामेंट, फ्लाई ओवर नहीं थे, नियोन रोशनी की झिलमिल नहीं थी, तब कलकत्ता के दिल बसते थे विद्यासागर, विवेकानन्द रवीन्द्रनाथ, सुभाषचन्द्र बोस, सीआर दास, शरतचन्द्र, नजरुल आदि। यह थी कलकत्ता की परम्परा। उस परम्परा को क्या वापस ला सकेंगे?आपको याद दिला दूँ किआजादी

को असुविधा होती है जो गाड़ी के बिना नहीं चलता, जिन्हें डीनर खाने5 सितारा होटल जाना पड़ता है। इन चंद अमीरों व संविधाभोगियों को इस बात को लेकर कोई सिरदर्दी नहीं है कि पूंजीवादी शोषण-लूट लाखों लोगों का सर्वनाश कर रही है, जीवन तबाह कर रही है, लेकिन बंद-हड़ताल करके कोई अपना विरोध दर्ज कराये, तो उन्हें एतराज है।

मैं एक बात और कहना चाहता हूँ। कांग्रेस-सीपीएम-बीजेपी की तरह ही तृणमूल भी अफसरशाही पुलिस-प्रशासन पर ही पूरी तरह निर्भर रहकर सरकार चल रही है। जो अफसरशाह और पुलिस के आला अफसर सीपीएम के शासनकाल में रिश्वत खाते थे, जनता पर अत्याचार करते थे, जो सिंगूर-नंदीग्राम में बर्बर हमलों के दोषी थे आज वे भी तृणमूल के अनुगत होकर आरामदेह जीवन जी रहे हैं। आज भी सर्वत्र भ्रष्टाचार, तस्करी, महिलाओं की खरीद-फरोख्त का अवैध धंधा, लूट-खसोट बेरोकटोक जारी है। सरकार का सीपीएम की तरह ही अब भी जितना ध्यान--नौकरीपेशा शहरी मध्यम वर्ग वालों की ओर ही है, गाँव के लोगों , गरीबों की ओर उतना नहीं है। इसलिए इन सब सवालों पर हमारी ओर से उसकी आलोचना और खिलाफत रहेगी ही। इसके साथ ही एक बात पर और आपका ध्यान खींचना चाहूँगा। केन्द्र में कांग्रेस सरकार के इतने बड़े घोटाले पकड़े जा रहे हैं, इतनी महंगाई, पेट्रोल-डीजल-केरोसिन तेल-रसोई गैस की कीमतें तेजी से बढ़ती जा रही है, जबकि तृणमूल चुप्पी साधे क्यों बैठी है। क्यों? क्या इसलिए कि केन्द्रीय सरकार में तृणमूल है? क्या इसलिए कि इस राज्य में केन्द्र की मदद चाहिए? इन सब कारणों से क्या प्रतिवाद नहीं किया जाये? स्वाभाविक है कि जनता के मन में ये सब सवाल दिखाई दे रहे हैं।

34 साल का शासन खोकर सीपीएम के नेता मायूस हो गये हैं। मैं उनसे कहता हूँ कि देशी-विदेशी पूंजी के स्वार्थ में आपने कितने अच्छे काम किये हैं। आपके मुख्यमंत्री ने सिंगूर के आन्दोलनकारी किसानों को कहा था कि टाटा का बाल भी नहीं छूने देंगे। आपने एकाधिकारी पूंजीपतियों को कितना बड़ा भरोसा दिया था। नन्दीग्राम में इस घिनौनी साम्राज्यवादी-पूंजीवादी साजिश का लोगों ने प्रतिरोध किया, उस वजह से वहां सामूहिक बलात्कार, नरसंहार कराये। सीपीएम के मुख्यमंत्री ने कहा था कि नंदीग्राम के लोगों की ईंट का जवाब पत्थर से दे दिया गया। अब कार्यकर्ताओं से कह रहे हैं कि वर्ग संघर्ष भूल गये थे। ये नेतागण किसके लिए संघर्ष कर रहे थे? दूसरी बार रात के अन्धेरे में नन्दीग्राम के घर-घर में हाहाकार मचा हुआ था, बेटियों के सामने माताओं से बलात्कार किया जा रहा था बहुओं के

(शेष पृष्ठ 8 पर)

R.N.I. No.- 43022/85
P.R.No.-DL(C)-12/1123/2009-2011
Posting at IPMBC on 7–8 and 22–23 of Every Month

कॉ. प्रभाष घोष का भाषण...

(पृष्ठ 7 का शेष)

सामने सास से बलात्कार कर रहे थे, कितनी बर्बरता बरपाई थी। तभी अलीमुद्दीन में, राइटर्स बिल्डिंग में सीपीएम नेताओं ने कहा था कि सूर्योदय हो गया। आपरेशन सफल हुआ। गौर कीजिए, आज 'वर्ग संघर्ष', 'गरीबों के हित' के बारे में कितना कुछ लिख रहे हैं, लेकिन इन्होंने एक बार भी सिंगूर–नन्दीग्राम के वीभत्स अत्याचारों के लिए माफी नहीं माँगी है, अफसोस तक भी जाहिर नहीं किया है। सीपीएम की भूमिका से पूंजीपति बड़े खुश थे, पर वह अलोकप्रिय हो गई है। अब कुछ दिन और सीपीएम सरकार रहने से आन्दोलन बढ़ेगा, लोग और भी ज्यादा आन्दोलन करेंगे। आन्दोलन का उभार रोकना है तो अब सीपीएम को सत्ता से हटाना जरूरी है। फिर दोबारा उचित अवसर आने परे बुर्जुआ उसे फिर ले आयेगा, केन्द्र में जैसे कांग्रेस और बीजेपी अदल–बदल कर बारी–बारी से आ जाती हैं। इसलिए सीपीएम नेताओं को चिन्ता करने की कोई बात नहीं है!

कठिन–कठोर और बेमिसाल संग्राम से कॉ. शिवदास घोष ने एसयूसीआई(सी) निर्मित की

दोस्तो, भारत के इन भयावह संकट के दिनों में अर्थव्यवस्था, राजनीति, समाज, संस्कृति, व्यक्तिगत जीवन, पारिवारिक जीवन सब कुछ घोर विपत्ति की गिरफ्त में है। अन्य सभी पार्टियाँ–उनके झण्डे, नाम में चाहे जो भी फर्क हो, सभी पूंजीवाद की ताबेदारी कर रही हैं। इनकी शिरोमणी है कांग्रेस। लम्बे अर्से से केन्द्र व विभिन्न राज्यों में यह सरकार चला रही है। आज भी केन्द में सत्तारूढ़ होकर किस तरह जनता पर हमले कर रही है आप लोग भुक्तभोगी है, आप सब समझते हैं। एसयूसीआई(सी) ही एकमात्र पार्टी है जो मार्क्सवाद–लेनिनवाद–शिवदास घोष की चिन्तनधारा को हथियार बनाकर समस्त प्रतिकूलताओं के खिलाफ डटी खड़ी रह कर जनता की माँगों को लेकर अकेली संघर्षरत है। हमने केन्द्र सरकार की जनविरोधी नीतियों के खिलाफ देश भर में आन्दोलन का आह्वान किया है, फरवरी में जायज माँगों को लेकर हजारों लोग दिल्ली कूच करेंगे। यह पार्टी क्रांतिकारी पार्टी है। इस पार्टी के संस्थापक कॉमरेड शिवदास घोष ने आजादी आन्दोलन में 13 साल की उम्र में घर छोड़ दिया था। उस समय उनकी प्रेरणा का स्रोत थे विद्यासागर–विवेकानंद–रवीन्द्रनाथ–

कॉमरेड शिवदास घोष ने कहा कि स्टालिन मेरे शिक्षक हैं, माओ त्से–तुंग मेरे शिक्षक हैं, लेकिन सीपीआई मार्क्सवादी पार्टी नहीं हैं। यह लोगों को समझाना कितना कठिन था। नेताजी द्वारा स्थापित फारवर्ड ब्लॉक, अनुशीलन समिति से निर्मित हुई आरएसपी कितनी ताकतवर थी। इसके अलावा और भी कई बड़ी–बड़ी वामपंथी पार्टियाँ थी। जब कॉमरेड शिवदास घोष ने कुछ मुठ्ठीभर सहयोद्धाओं को लेकर यह पार्टी बनाना शुरू किया था। इसी तरह एक–एक दो–दो करके उन्होंने समर्थक इकट्ठे किये। किसी भी अखबार, रेडियो ने कोई प्रचार नहीं किया। लेकिन सत्य की अमोघ शक्ति, सच्चाई का पैगाम अजेय है। आज हमारी पार्टी भारत के कोने–कोने में फैल गई है। हजारों–हजार मजदूर–किसान–छात्र–नौजवान– महिलाएं कॉमरेड शिवदास घोष द्वारा संस्थापित क्रांतिकारी पार्टी के झण्डे तले इकट्ठे हुए हैं। किसी टीवी–रेडियो–अखबार के प्रचार के बल पर यह नहीं हुआ। यह क्रांतिकारी विचारधारा की ताकत के बल पर हुआ है। कॉमरेड शिवदास घोष की शिक्षाएँ बांग्लादेश और नेपाल पहुँच गई हैं। कुछ दिन पहले पाकिस्तान कम्युनिस्ट पार्टी ने हमसे आग्रह करके कॉमरेड शिवदास घोष की किताबें माँगी हैं, उन किताबों को उर्दू में छापने की इजाजत माँगी है। कॉमरेड शिवदास घोष की क्रांतिकारी चिन्तन से लैस किताबें पश्चिम एशिया, अमेरिका, लैटिन अमेरिका, रूस, इंग्लैंड, इटली, फ्रांस जैसे यूरोपीय देशों में गई हैं,वहां की भाषाओं में उनका अनुवाद भी हुआ है। वे इस पार्टी को किसके बल पर गठित कर पाये? वे अत्याचारित, शोषित–पीड़ित लोगों के प्रति गहरे प्यार व लगाव के बल पर यह काम कर पाये।

कॉमरेड शिवदास घोष की जिन्दगी और शिक्षाएं ही हैं हमारी शक्ति का स्रोत

वे कहा करते थे कि सड़क के भिखारियों और अनाथ बच्चों का जो विलाप व दु:ख–दर्द है, भुखमरी से होने वाली गरीबों की ये जो मौत हैं–एक क्रांतिकारी होने के नाते आप याद रखें कि इनके लिए अपने आपको ही जिम्मेदार समझें। आप उन्हें बचा सकते थे, क्योंकि आप तो जानते हो कि यह तो पूंजीवादी शोषण का लाजिमी तौर पर होने वाला अंजाम है। मूल्यबोधों का जो ह्रास हो रहा है और स्नेह–प्यार–प्रेम खत्म हो रहा है और सुकोमल भावनाएं मरती जा रही हैं, आप क्रांतिकारी विचारधारा के बल पर सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रिया को तेज करके इनका ह्रास रोक सकते हो। वे कहा करते थे कि दूसरों से भी सीखने की कोशिश करते हैं। ये सब शिक्षाएं कॉमरेड शिवदास घोष हमें दे गये हैं। उन्होंने कहा था कि मैंने जब शुरू किया था, तब विद्यासागर की इस बात को सामने रखकर शुरू किया था कि 'सभी जिसे कर सकते हैं, आप भी वह कर सकते हैं'। फिर उन्होंने कहा कि 'मेरी सोच यह थी कि दूसरे जिसे यह सोचते हैं कि वे वह काम नहीं कर सकते, क्रांति के लिए मैं वह करूँगा'। उन्होंने हमें सिखाया था : 'कभी मत कहो कि नहीं कर पाऊँगा। क्रांति के लिए जो भी जरूरी है वह करने के लिए दृढ़प्रतिज्ञ बनो'। जितनी बाधा होती, उसके मुकाबले उतनी ही दृढ़तर उनकी प्रतिज्ञा होती थी। वे चाहते थे कि हम लोगों को प्यार के भावावेग से जीतें, युक्ति–तर्क से जीतें, मानवीय गुणों से जीतें। उन्होंने आगाह किया था कि लम्बे क्रांतिकारी संघर्ष में बार–बार हार होगी, नाकामी मिलेगी, लेकिन हताश न होना, हिम्मत न हारना। नाकामियों से सबक लेकर अगर हम आगे बढ़ते रहे, तो जीत निश्चित ही हासिल होगी। उन्होंने पार्टी में आने वाले लड़के–लड़कियों को सलाह दी थी कि वे मध्यमवर्ग सुलभ मिथ्याभिमान व मध्यमवर्गीय मानसिकता से मुक्त हों और गरीब किसानों के घरों में जायें, झुग्गी बस्तियों में जायें, मजदूरों के घरों में जायें और क्रांतिकारी राजनीति को ले जायें। उन्होंने कहा था कि सम्पत्तिबोध से, सम्पत्तिबोध जनित मानसिकता से मुक्त हो जायें।

ये सब उनकी शिक्षाओं की कुछ झलक हैं। हमारा काम है मजदूर–किसानों व आम लोगों में जाना, उनका डटकर साथ देना, अन्याय–अत्याचार के विरोध में सब तबकों के मेहनतकश लोगों को संगठित करना, उन्हें प्रतिवादी आन्दोलनों के भंवर में ले आना, उन्हें क्रांतिकारी विचारधारा से लैस करना और उनमें उन्नत संस्कृति पनपाना जारी करना। सिर्फ आन्दोलन की माँगों के बारे में उन्हें सचेत करने के अलावा आन्दोलन चलते समय क्रांतिकारी राजनीति सीखाना होगा और साफ–साफ यह समझाना होगा कि पूंजीवाद उनका मुख्य दुश्मन है। उन्हें पूंजीवाद के खिलाफ क्रांति की अत्यावश्यकता समझानी होगी। महान चरित्र और उच्च मानवीय गुण हासिल करने की साधना जनता के बीच भी ले जानी होगी। हमें व्यक्ति–केन्द्रिकता, खुदगर्जी, लोभ–लालच, क्रोध, नीचता, कायरता आदि सब घटिया प्रवृतियों के खिलाफ संघर्ष करना होगा। हमारे देश को आज कॉमरेड शिवदास घोष चिन्तनधारा से शिक्षित और अनुप्राणित खुदीराम, भगतसिंह, प्रीतिलता,

को लेकर हजारों लोग दिल्ली कूच करेंगे। यह पार्टी क्रांतिकारी पार्टी है। इस पार्टी के संस्थापक कॉमरेड शिवदास घोष ने आजादी आन्दोलन में 13 साल की उम्र में घर छोड़ दिया था। उस समय उनकी प्रेरणा का स्रोत थे विद्यासागर–विवेकानंद–रवीन्द्रनाथ–शरतचंद्र–नजरुल–सुभाष बोस–खुदीराम, भगतसिंह आदि। वे सच्चाई की खोज करते–करते 19–20 साल की उम्र में मार्क्सवाद के सम्पर्क में आये। मार्क्सवाद की चर्चा करते हुए वे समझ पाये कि इस देश में सही कम्युनिस्ट पार्टी नहीं है। इसी वजह से बहादूरी, साहस व अनगिनत शहीदों की कुर्बानियों से भरे इतने शानदार स्वतंत्रता संग्राम का यह त्रासदीपूर्ण हश्र हुआ। उन्होंने तय किया कि तब वह पार्टी हमें ही बनानी होगी। बमुश्किल दो–चार सहयोद्धा के सिवा उन दिनों और विशेष कोई साथ नहीं था। कितने दिन इस कलकत्ता शहर के फुटपाथ, प्लेट फार्म, पार्क में बिताये। दिन पर दिन, महीने पर महीने रहने के लिए जगह की तो बात दूर रही, अक्सर दो जून खाना भी नहीं जुटता था। एक समूह व्यंग–विद्रुप करता था। तत्कालीन सीपीआई के लोग कहा करते थे कि चमगिदड़ भी पक्षी बनने चला है, एससूसीआई भी क्या कोई पार्टी है। आरएसपी–फारवर्ड ब्लॉक के नेतागण भी ऐसे ही ताने मारा करते थे। कॉमरेड शिवदास घोष ने कभी परवाह नहीं की, सही तर्क को मूल्य दने वाले कुछ आम लोग कहते थे कि आपकी बात तो ठीक है, तर्क ठीक है, लेकिन आप यह सपना साकार कर नहीं पायेंगे। इतना बड़ा देश, इतने बड़े–बड़े नेता, इतनी बड़ी–बड़ी पार्टियाँ हैं, वहाँ आपकी कोई जान–पहचान नहीं है, आपके पास धनबल, जनबल, प्रचार और प्रतिष्ठित नेता आदि कुछ भी नहीं है।ं डर है कि कहीं अपना भविष्य ही खराब न कर बैठें। कॉमरेड शिवदास घोष का गर्व भरी आवाज के साथ जवाब था–मैं भारत के करोड़ों गरीब लोगों की मुक्ति के जिस रास्ते को सच समझा हूँ, मैं अकेला होने पर भी उस पर चलूँगा। उसके लिए मैं मरते दम तक लड़ूँगा, लड़ते–लड़ते मरूँगा। मैं अपना जमीर नहीं बेच सकता, मैं अपनी इन्सानियत नहीं बेच सँकूगा। हो सकता है कि मैं पेड़ के तले ही मर जाँऊ और किसी को पता भी नहीं चले। पर मेरी लड़ाई में सत्य हुआ तो एकदिन इतिहास जरूर उसकी कदर करेगा। दुनिया के इतिहास में हर युग में सब महापुरुषों का संघर्ष–साधना इसीतरह शुरू हुई थी। उस समय सोच कर देखिये कि एकताबद्ध सीपीआई और उसके नेता कार्यकर्ता भी ईमानदार थे। तब स्टालिन जिन्दा थे, माओ त्से–तुंग जिन्दा थे, उन्होंने सीपीआई को मान्यतादी हुई थी। जबकि मूल्यबोधों का जो ह्रास हो रहा है और स्नेह–प्यार–प्रेम खत्म हो रहा है और सुकोमल भावनाएं मरती जा रही हैं, आप क्रांतिकारी विचारधारा के बल पर सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रिया को तेज करके इनका ह्रास रोक सकते हो। वे कहा करते थे कि अपने जमीर को जिन्दा रखना और इस हृदयवृन्ति के बल पर आपको लड़ना होगा। इसलिए उन्होंने कहा था कि क्रांतिकारी राजनीति तो और भी उच्चे दर्जे की हृदयवृति होती है। उन्होंने हमें सिखाया था कि साम्राज्यवादियों–पूंजीपतियों के हाथों में बंदूक–तोप जैसे घातक हथियारों के जखीरे हैं, हाइड्रोजन–एटम बम जैसे जनसंहारक हथियार हैं, लेकिन हमारी ताकत का स्रोत मार्क्सवाद–लेनिनवाद है, उन्नत ज्ञान है, उन्नत चेतना है, सच्चाई की अजेय शक्ति है, उस ताकत के बल पर ही हम सभी तापों, बंदूकों और बमों पर भारी पड़ेंगे और जीत हासिल करेंगे। वे बार–बार कहा करते थे कि मार्क्सवाद को जानो, समझो और लागू करो। मजदूर–किसान और मेहनतकश जनता सभी को सही दृष्टि से यह क्रांतिकारी विचारधारा समझनी होगी। वे कहा करते थे कि पहले आप विद्यासागर, रवीन्द्रनाथ, शरतचन्द्र,नजरुल और भगतसिंह आदि से सीखो। उन्होंने खासतौर पर आजादी आन्दोलन की समझौताहीन संघर्ष की धारा के प्रतिनिधियों, उस जमाने के क्रांतिकारियों के जीवन से सीख लेने, उनके गुणों का सार अपनाने पर जोर दिया था। ये गुण अपनाने और आत्मसात करने के बाद ही हम इससे उन्नततर सर्वहारा संस्कृति हासिल कर कर सकते हैं। क्योंकि उस जमाने के महापुरुष और क्रांतिकारी सामन्तवाद और साम्राज्यवाद के खिलाफ लड़े थे और उस जमाने में राष्ट्रीयतावाद उच्च आदर्श था। लेकिन हमारी लड़ाई पूंजीवाद से है इसलिए हमें मार्क्सवाद और सर्वहारा संस्कृति की जरूरत है। पिछले जमाने के तेजस्वी व्यक्तियों के जीवन से की सीख लेकर उन्नत चरित्र हासिल करने की साधना हमारी पार्टी में एक जीवन्त संघर्ष के तौर पर समझी जाती है। इससे हम सीखने और स्तर ऊंचो का कोशिश करते हैं। जो लोग बाहर से देखते हैं, उनमें से बहुतेरे लोग हमारे संघर्ष, शिष्ट सुशील शालीन व्यवहार और अनुशासित आचरण की प्रशंसा करते हैं। लेकिन आज के चौतरफा अंधकारमय दिनों में हमारे काम की राह रोशन क्या चीज कर रही है? यह है कॉमरेड शिवदास घोष की चिन्तनधारा, उनकी क्रांतिकारी शिक्षाएं। हम कभी किसी दूसरी पार्टियों के किसी नेता–कार्यकर्ता के खिलाफ कोई कुत्सा–निन्दा प्रचार नहीं करते। हम अपनी विचारधारा से, तार्किक दृष्टिकोण से उनके साथ संघर्ष करने की कोशिश करते हैं। हम व्यक्ति–केन्द्रिकता, खुदगर्जी, लोभ–लालच, क्रोध, नीचता, कायरता आदि सब घटिया प्रवृतियों के खिलाफ संघर्ष करना होगा। हमारे देश को आज कॉमरेड शिवदास घोष चिन्तनधारा से शिक्षित और अनुप्राणित खुदीराम, भगतसिंह, प्रीतिलता, सूर्यसेन, चन्द्रशेखर आजाद, अश्फाक उल्ला जैसे लड़के–लड़कियों की जरूरत है। यह आन्दोलन हमें चाहिए। मैं हमारे कार्यकर्ताओं, समर्थकों और हमदर्दों से वे चाहे जहाँ कहीं भी हों सभी से आह्वान करता हूँ कि आज के बच्चों को बचाने की जिम्मेदारी अपने कंधों पर लें। आठ–दस साल के बच्चों से लेकर किशोर तक सब पूंजीवाद के हमले से नष्ट होते जा रहे हैं, टीवी के माध्यम से मोबाइल के माध्यम से नग्न यौनता के शिकार होते जा रहे हैं। पूरा यूरोप और अमेरिका इस गंभीर सामाजिक खतरे की चपेट में आता जा रहा है। 12 साल के लड़के–लड़कियों को अमेरिका, इंग्लैण्ड में गर्भ निरोधक मुहैया कराये जा रहे हैं, वहाँ स्कूलों में गर्भपात क्लिनिक खुल रहे हैं, इस तरह के बहुत भयंकर हालात हैं। हमारे देश में भी यह संक्रामक रोग फैलता जा रहा है। इन लड़के–लड़कियों का सामाजिक जीवन, पारिवारिक जीवन क्या होगा, ये कहाँ जायेंगें? बच्चों तक, विद्यासागर, विवेकानन्द, रवीन्द्रनाथ, शरतचंद्र, नजरुल को पहुँचा देना, खुदीराम, देशबंधु, लाला लाजपत राय, सुभाषचन्द्र बोस, भगतसिंह सरीखे देश के नवजागरण काल के मनीषियों व स्वतंत्रता सेनानियों के जीवन–संघर्ष को पहुँचा देना हमारी जरूरत है। इन्हें याद करने से नैतिकता, चरित्र, इन्सानियत कुछ हद तक तो बचेगा ही।

सर्वहारा के महान नेता कॉमरेड शिवदास घोष के स्मृति दिवस पर उनकी अमूल्य सीखों को याद करना हमारे लिए एक रस्म निभाने का विषय नहीं है। इसके द्वारा हम अपने जमीर को जगाने की कोशिश करते हैं, पिछले साल इस दिन जो सोचा था, जो शपथ ली थी, उसे पूरा करने के लिए एक साल तक हमने क्या किया, यह सवाल हम अपने जमीर से, विवेक से पूछते हैं। याद रखें यह समाज टूट रहा है, यह सभ्यता ध्वंस्त हो रही है। इसलिए वक्त की पुकार है कि मुक्ति चाहिए। यह वांछित मुक्ति कौन दिला सकता है? मार्क्सवाद–लेनिनवाद–शिवदास घोष की चिन्तनधारा पर संगठित क्रांतिकारी आन्दोलन ही मुक्ति दिला सकता है। यह गठित करना हमारी जिम्मेदारी है। यही बात कहकर मैं अपनी बात यहीं समाप्त करता हूँ।

सोशलिस्ट यूनिटी सेन्टर ऑफ इण्डिया की ओर से कॉ. गिरिजेश्वर सिंह द्वारा 3ए/38, डब्ल्यू.ई.ए., करोल बाग. नई दिल्ली–5 से संपादित व प्रकाशित तथा परम्परा प्रिंटिंग प्रेस, बी–70/83, इण्डस्ट्रियल एरिया, लॉरेंस रोड, दिल्ली–35 से मुद्रित, दूरभाष: 011–25726631, E-mail: sarvaharadrishtikon@yahoo.com